Con. 3. VIII-22.49
320

अंक 8
संख्या 22

बुधवार,
15 जून
सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

संविधान का प्रारूप
[अनुच्छेद 203, 270 से 274 तथा 289 पर विचार] ...1331-1386

भारतीय संविधान सभा

बुधवार, 15 जून सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान सभा, कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली, में प्रातः आठ बजे अध्यक्ष महोदय (माननीय डा. राजेन्द्र प्रसाद) के सभापतित्व में समवेत हुई।

संविधान का प्रारूप—(*जारी*)

अनुच्छेद 203

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई : जनरल): अध्यक्ष महोदय मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

''अनुच्छेद 203 में, हाशिये के शीर्षक के स्थान में निम्नलिखित रखा जाये:

'Power of superintendence over all courts by the High Court.' "

(सब न्यायालयों के अधीक्षण की उच्च न्यायालय की शक्ति)

मैं यह प्रस्ताव भी उपस्थित करता हूं कि:

''अनुच्छेद 203 के खण्ड (2) में 'The High Court may' (उच्च न्यायालय) शब्दों के पूर्व 'Without prejudice to the generality of the foregoing provisions' (पूर्वगामी उपबन्धों की व्यापकता पर बिना प्रतिकूल प्रभाव हुए) शब्द प्रविष्ट किये जायें।''

मैं यह प्रस्ताव भी उपस्थित करता हूं कि:

''संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2664 के सम्बन्ध में–

(1) अनुच्छेद 203 के खण्ड (1) में 'all courts' (सब न्यायालयों) शब्दों के बाद 'and tribunals' (और न्यायाधिकरणों) शब्द प्रविष्ट किये जायें।

(2) अनुच्छेद 203 के खण्ड (2) से उपखण्ड (ख) निकाल दिया जायें।''

(संशोधन संख्या 2665 उपस्थित नहीं किया गया।)

***श्री एच.वी. कामत** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

''अनुच्छेद 203 के खण्ड (2) में 'Every High Court' (प्रत्येक उच्च न्यायालय) शब्दों के पहले 'In particular' (विशेषकर) शब्द प्रविष्ट किये जायें।''

यदि यह सभा इस अनुच्छेद के सभी खण्डों को साथ पढ़े तो उसे विदित होगा कि खण्ड (1) में कुछ सामान्य शक्तियों का उल्लेख है जो इस अनुच्छेद के अधीन प्रत्येक

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[श्री एच.वी. कामत]

उच्च न्यायालय को दी जा रही हैं। इसलिये मेरे विचार से जहां तक इस अनुच्छेद के खण्ड (2) का सम्बन्ध है, जिसमें कुछ निश्चित शक्तियों का उल्लेख है अथवा उच्च न्यायालय को कुछ मामलों में शक्तियां प्रदान की गई हैं, उसमें इन उपबन्धों की ओर विशेष रूप से ध्यान आकृष्ट करने की आवश्यकता है। खण्ड (1) में कुछ सामान्य उपबन्ध हैं। खण्ड (2) में, जो खण्ड (1) के बाद आता है और जिसमें कुछ विशेष बातों का उल्लेख है, यह उपबन्धित होना चाहिये कि उच्च न्यायालय को विशेष रूप से अमुक-अमुक कार्य करने चाहिये।

जहां तक डा. अम्बेडकर द्वारा उपस्थित संशोधन संख्या 2664 का सम्बन्ध है, जो इस अनुच्छेद के हाशिये के शीर्षक के बारे में है, इस सभा में पहले हाशिये के शीर्षकों के सम्बन्ध में एक प्रश्न उठाया गया था और डा. अम्बेडकर ने स्वयं कहा था कि कुछ लोग हाशिये के शीर्षकों को संविधान का अंग मानते हैं और कुछ लोग नहीं मानते हैं इसलिये मैं कह नहीं सकता कि इस सम्बन्ध में किसी संशोधन को विधिवत् उपस्थित करने की आवश्यकता है या नहीं। इसके अतिरिक्त मुझे इस सम्बन्ध में सन्देह है कि उनके संशोधन की शब्दावली उपयुक्त है या नहीं। संशोधन में कहा गया है 'सब न्यायालयों के अधीक्षण की उच्च न्यायालय की शक्ति'। इस अनुच्छेद में अधीक्षण की कतिपय शक्तियों और तत्सम्बन्धी विषयों के सम्बन्ध में ही उपबन्ध हैं। मेरे विचार से इसकी कोई विशेष आवश्यकता नहीं है कि 'सब न्यायालयों के' शब्द प्रविष्ट किये जाये। अनुच्छेद में अधीक्षण की शक्तियों के सम्बन्ध में उपबन्ध है। यदि हाशिये के शीर्षक में 'सब न्यायालयों के शब्द न भी रखे जायें तो फिर भी यह स्पष्ट हो जायेगा कि इस अनुच्छेद में अधीक्षण की शक्तियों का उल्लेख है। 'उच्च न्यायालय की अधीक्षण की शक्तियां' कहना पर्याप्त है और अनुच्छेद में 'सब न्यायालयों के' आदि का उल्लेख होगा। इस अनुच्छेद का उद्देश्य यह है कि उच्च न्यायालयों को अधीक्षण की शक्तियां प्रदान की जायें। किन न्यायालयों के सम्बन्ध में ये शक्तियां प्रदान की गई हैं इसका उल्लेख अनुच्छेद में हो सकता है। आरम्भ में हाशिये के शीर्षक में केवल उच्च न्यायालयों के प्रशासन सम्बन्धी कृत्य' शब्द थे। हाशिये के उस शीर्षक को देखते हुये मेरे विचार से 'उच्च न्यायालय की अधीक्षण की शक्तियां' शब्द पर्याप्त हैं और हम 'सब न्यायालयों के' शब्दों को निकाल सकते हैं। श्रीमान्, मैं इस प्रस्ताव को उपस्थित करता हूं।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्त प्रान्त : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरे माननीय मित्र श्री कामत ने जो संशोधन उपस्थित किया है उसके सम्बन्ध में मेरा यह विचार है कि वह संशोधन संख्या 2666 के उपस्थित किये जाने के पश्चात् अनावश्यक हो जाता है। उसमें कहा गया है कि ''पूर्वगामी उपबन्ध की व्यापकता पर बिना प्रतिकूल प्रभाव हुए उच्च न्यायालय।'' यह श्री कामत के संशोधन की शब्दावली से अच्छी शब्दावली है जो 'विशेषकर आदि' शब्दों से आरम्भ होता है। इसलिये मुझे आशा है कि श्री कामत अपने संशोधन पर मतदान के लिये जोर न देंगे।

मुझे डा. अम्बेडकर के संशोधन संख्या 209 को देख कर प्रसन्नता हुई है जिसमें ये शब्द हैं कि ''प्रत्येक उच्च न्यायालय सब न्यायालयों और न्यायाधिकरणों का अधीक्षण करेगा।'' मैं माननीय डाक्टर महोदय का ध्यान श्रम न्यायाधिकरणों की ओर आकृष्ट करना चाहता

हूं। श्रम न्यायाधिकरणों का महत्त्व प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। हमें इन न्यायाधिकरणों का कटु अनुभव हुआ है। वे अभी न्यायालयों की परम्परा का अनुसरण नहीं करने लगे हैं। मुझे आशा है कि अब चूंकि उच्च न्यायालय को उनके सम्बन्ध में शक्तियां प्राप्त हो जायेंगी इसलिये वे उसके अधीक्षण तथा नियंत्रण के अधीन आ जायेंगे। इस प्रकार ये श्रम न्यायाधिकरण समुचित रूप से स्थापित हो जायेंगे और उनमें यथोचित प्रक्रिया का अनुसरण हो सकेगा।

मुझे इसकी भी प्रसन्नता है कि खण्ड (2) का उपखण्ड (ख) निकाल दिया गया है। इस प्रकार उच्च न्यायालय की शक्ति अधिक विस्तृत हो गई है। आरम्भ में उसे केवल व्यवहार विषयक मामलों में वादों को तथा अपीलों को अपने सामने उपस्थित कराने की शक्ति प्रदान थी। अब यह सभी प्रकार के मामलों को अपनी इच्छानुसार मंगा सकता है। इसलिये मैं इस संशोधन का पूरे जोर से समर्थन करता हूं।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 203 में, हाशिये के शीर्षक के स्थान में निम्नलिखित रखा जाये:

'Power of superintendence over all courts by the High Court.' "

(सब न्यायालयों के अधीक्षण की उच्च न्यायालय की शक्ति।)

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 203 के खण्ड (2) में 'The High Court may' (उच्च न्यायालय) शब्दों के पूर्व 'Without prejudice to the generality of the foregoing provisions' (पूर्वगामी उपबन्धों की व्यापकता पर बिना प्रतिकूल प्रभाव हुए) शब्द प्रविष्ट किये जायें।''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 203 के खण्ड (2) में 'Every High Court' (प्रत्येक उच्च न्यायालय) शब्दों के पहले 'In particular' (विशेषकर) शब्द प्रविष्ट किये जायें।''

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2664 के सम्बन्ध में–

(1) अनुच्छेद 203 के खण्ड (1) में 'alll courts' (सब न्यायालयों) शब्दों के बाद 'and tribunals' (और न्यायाधिकरणों) शब्द प्रविष्ट किये जायें।

(2) अनुच्छेद 203 के खण्ड (2) से उपखंड (ख) निकाल दिया जाये।''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 203, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 203, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया गया।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रास : जनरल): श्रीमान्, अनुच्छेद 209-क, 209-ख, 209-ग, 210 और 211 स्थगित रखे जायें। अभी हमने इनके वैकल्पिक मसौदे तैयार नहीं किये हैं।

***माननीय सदस्य:** जी हां, वे स्थगित रखे जाये।

अनुच्छेद 270

***अध्यक्ष:** तब हम अनुच्छेद 270 को उठाते हैं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल : मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> ''अनुच्छेद 270 से, 'the Dominion of' (का अधिराज्य) शब्द निकाल दिये जायें।''

'अधिराज्य' शब्द आजकल के भारत के लिये प्रयुक्त होता है। हमारे संविधान में जो रूप रेखा निश्चित की जा रही है उसमें 'अधिराज्य' शब्द के लिये अथवा इस शब्द के आशय के लिये कोई स्थान न रहेगा। मैंने यह प्रस्ताव इसी कारण उपस्थित किया है कि इस शब्द को निकाल दिया जाये। यदि यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया तो केवल 'भारत सरकार' रह जायेगा न कि 'भारत अधिराज्य की सरकार'।

(संशोधन संख्या 2976 उपस्थित नहीं किया गया।)

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> ''संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2975 और 2976 के सम्बन्ध में, अनुच्छेद 270 में 'assets and liabilities' (आस्तियां और दायित्व) शब्दों के स्थान में 'assets, liabilities and obligations' (आस्तियां, दायित्व और आभार) शब्द रखे जायें।''

जहां तक मि. नजीरुद्दीन अहमद के संशोधन का सम्बन्ध है, क्या मैं यह कह सकता हूं कि वे यह भूल गये हैं कि इस संविधान के अधीन जो सरकार अस्तित्व में आयेगी उसे हमने 'भारत सरकार' कहा है और इस समय की सरकार को 'भारत अधिराज्य की सरकार' कहा है इसलिये, यदि उनका संशोधन स्वीकार कर लिया गया तो उसका अर्थ यह होगा कि भारत सरकार, भारत सरकार के दायित्वों, आभारों और आस्तियों की उत्तराधिकारिणी होगी। यह बहुत बेढंगा पाठ होगा। इसलिये जो शब्द रखे गये हैं वे उपयुक्त हैं और उन्हें रहने देना चाहिये।

***माननीय श्री के. सन्तानम्** (मद्रास : जनरल): मेरे विचार से हम इस अनुच्छेद को स्वीकार करने में बहुत जल्दी कर रहे हैं हम भारतीय राज्यों को प्रान्तों के अनुरूप ही बनाने का प्रयास करते रहे हैं किन्तु हम यहां केवल यह उपबन्धित कर रहे हैं कि पहले के प्रान्त उसी प्रकार रहेंगे किन्तु राज्यों के लिये इस प्रकार का कोई उपबन्ध नहीं रखा गया है।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** आपके संशोधन का आशय क्या है?

***माननीय श्री के. सन्तानमः** मैं किसी संशोधन की उपस्थित नहीं कर रहा हूं। मैं इस अनुच्छेद पर ही अपने विचार प्रकट कर रहा हूं। मेरे विचार से 270 और 271 अनुच्छेदों में भी वही भाव है जो उन अन्य अनुच्छेदों में है जिनका सम्बन्ध केवल प्रान्तों से है और राज्यों से नहीं है। इसलिये भविष्य के संविधान के हित में यह होगा कि इन दोनों को एक समान बना दिया जाये और इस अनुच्छेद की परिधि इतनी विस्तृत की जाये कि उसमें राज्य भी स्थान पा सके। जिन राज्यों को राज्यों के ही रूप में रखा गया है उन्हें पुराने राज्यों का उत्तराधिकारी समझा जाये और जहां कहीं वे संघांग बना लिये गये हैं अथवा प्रान्तों में समाविष्ट कर लिये गये हैं, उनका यथोचित रूप से उल्लेख होना चाहिये। उदाहरणार्थ बड़ोदा, बम्बई में समाविष्ट कर दिया गया है। यदि आप अनुच्छेद 270 को वर्तमान रूप में स्वीकार करते हैं तो उसका अर्थ यह होगा कि बम्बई का पुराना प्रान्त ही, जिसमें बड़ोदा नहीं है, अनुसूची में उल्लिखित राज्य समझा जायेगा। मेरे विचार से इस सम्बन्ध में किसी यथोचित उपबन्ध को स्थान देना चाहिये। यहां केवल ये शब्द हैं ''.....क्रमशः भारत सरकार अथवा प्रान्तों के उत्तराधिकारी होंगे।'' भारत सरकार के अधिनियम के अधीन बम्बई प्रान्त में बड़ोदा राज्य सम्मिलित नहीं था। आज उस प्रान्त में बड़ोदा राज्य समाविष्ट कर दिया गया है। इसलिये मैं यह जानना चाहता हूं कि अनुच्छेद 270 को वर्तमान रूप में स्वीकार करने का क्या प्रभाव होगा। यह अर्थ भी लगाया जा सकता है कि भविष्य में बम्बई में बड़ोदा और कोल्हापुर सम्मिलित न होंगे। इन सब बातों का विचार करना आवश्यक है। मेरे विचार से उचित यह होगा कि इस समय अनुच्छेद 270 पर विचार-विमर्श स्थगित किया जाये ताकि उसका स्वरूप उन उपबन्धों के अनुरूप हो सके जो आगे बताये जायें।

***श्री एच.वी. कामतः** इस अनुच्छेद के फलस्वरूप कई प्रश्न उठते हैं। मेरे मित्र श्री सन्तानम ने अभी यह मत प्रकट किया कि इस अनुच्छेद को स्वीकार करने में शीघ्रता न दिखानी चाहिये। कुछ कारणों से मैं उनसे सहमत हूं और वे ये हैं: पहले जैसा कि श्री सन्तानम कह चुके हैं, प्रथम अनुसूची के भाग 1 में उल्लिखित प्रान्तों में बहुत से परिवर्तन हो गये हैं और इस समय भी उनमें बहुत से परिवर्तन हो रहे हैं। इस समय हम कह नहीं सकते कि संविधान के प्रवर्तन में आने पर क्या स्थिति होगी। बम्बई प्रान्त का उदाहरण दिया गया है। इस अनुच्छेद के अन्त में भी पश्चिमी बंगाल और पूर्वी पंजाब का उल्लेख है। उसमें इन नये प्रांतों की स्थापना को स्वीकार किया गया है। इसलिये क्या यह तर्कयुक्त नहीं है कि जो राज्य तथाकथित राज्यपालों के प्रान्तों में समाविष्ट हो गये हैं उन्हें भी स्वीकार किया जाये? केवल बम्बई में ही नहीं बल्कि मद्रास में, मध्य प्रान्त में और मेरे विचार से बिहार में भी बहुत से परिवर्तन हो गये हैं। कई राज्य इन प्रान्तों में समाविष्ट हो गये हैं। इस प्रकार समाविष्ट होने से बहुत से सारवान परिवर्तन हुये हैं और इनके आधार पर प्रथम अनुसूची के भाग 1 में तथा प्रथम अनुसूची के भाग 3 में परिवर्तन करना आवश्यक है। भाग 3 के कई राज्य अब भारत के मानचित्र से लुप्त हो गये हैं। उदाहरणार्थ यदि आप प्रथम अनुसूची के भाग 3 को देखें तो आपको ज्ञात होगा कि बड़ोदा का अब उसमें स्थान नहीं रह गया है। वह बंबई में समाविष्ट हो गया है। कोल्हापुर का भी कोई स्थान नहीं रह गया है और वह भी बंबई में सम्मिलित हो गया है। इसलिये जब तक इस अनुसूची को नहीं

[श्री एच.वी. कामत]

बदला जाता और भाग 1 और 3 में आवश्यक परिवर्तन नहीं किये जाते, मेरे विचार में यह कोई बुद्धिमानी की बात न होगी कि संविधान के प्रवर्तन में आने के समय जो आस्तियां, दायित्व और आभार हो उनका उल्लेख किया जाये। हमें यह स्पष्टतया समझ लेना चाहिये कि भाग 1 में उल्लिखित प्रान्त तथा भाग 3 में उल्लिखित राज्य पहले क्या थे और अब क्या हो गये हैं।

***अध्यक्षः** क्या अनुसूची स्वीकार कर ली गई है?

***श्री एच.वी. कामतः** अभी नहीं, इसीलिये मैं यह कह रहा हूं कि जब तक अनुसूची स्वीकार नहीं कर ली जाती तब तक हम इस अनुच्छेद को स्थगित रखे।

दूसरी बात यह है कि मैं यह निश्चित रूप से नहीं कह सकता कि इस अनुच्छेद की दूसरी पंक्ति में 'भारत सरकार' शब्द आने चाहिये या नहीं, जबकि आगे चल कर इसी अनुच्छेद में 'भारत अधिराज्य की सरकार' शब्द प्रयुक्त है। इन दोनों में स्पष्ट रूप से विभेद करने की दृष्टि से मेरा यह सुझाव है कि इस अनुच्छेद की दूसरी पंक्ति में 'भारतीय गणराज्य की सरकार' अथवा 'भारतीय संघ की सरकार' शब्द रखे जायें। सभा को स्मरण होगा कि संविधान के अनुच्छेद 1 में यह उल्लिखित है कि भारत एक राज्य संघ होगा। भारत अधिराज्य और भविष्य की भारत सरकार में विभेद करने के लिये हमें या तो 'भारतीय गणराज्य की सरकार' शब्द रखने चाहिये या 'भारतीय संघ की सरकार'। केवल 'भारत सरकार' शब्द रखने से काम न चलेगा।

जहां तक 'भारत अधिराज्य' पदावली के प्रयोग का सम्बन्ध है, मुझे अभी इस सम्बन्ध में समाधान नहीं हुआ है कि सांविधानिक स्थिति क्या है? यदि मुझे ठीक स्मरण है तो इस सत्र के आरम्भ में माननीय श्री जवाहरलाल नेहरू ने इस सभा के सम्मुख राष्ट्रमंडल से हमारे भावी सम्बन्धों के बारे में एक संकल्प उपस्थित किया था। संकल्प के मसौदे के आरम्भ में 'लंदन में अधिराज्यों के प्रधान मंत्रियों का सम्मेलन आदि' शब्द थे परन्तु बाद में माननीय श्री जवाहरलाल नेहरू ने उन्हें स्वयं बदल दिया और 'राष्ट्रमंडल के प्रधान मंत्रियों के सम्मेलन आदि' शब्द रखे। उस समय समाचार-पत्रों के संवादों में यह कहा गया था कि सम्मेलन ने यह निश्चय किया है कि 'अधिराज्य' शब्द निकाल दिया जाये। मैं कह नहीं सकता कि यह परिवर्तन कब किया जायेगा सम्भवतः जब तक हम अपने देश को गणराज्य घोषित न करें, यह शब्द प्रयोग में रहेगा। इस दशा में यह प्रश्न नहीं उठता। किन्तु राष्ट्रमंडल के प्रधान मंत्रियों के लंदन के सम्मेलन में पिछली अप्रैल को जो निश्चय किया गया था उसे दृष्टि में रखते हुए यदि हम चाहें तो 'अधिराज्य' शब्द को निकाल सकते हैं। राष्ट्रमंडल के नाम के सम्बन्ध में विभिन्न मत हैं। मि. एटली ने कहा था ''आप उसे जो भी नाम देना चाहें दें किन्तु आस्ट्रेलिया के प्रधानमंत्री ने कुछ समय पहले आस्ट्रेलिया के हाउस ऑफ रिप्रेजेंटेटिवस में बोलते हुए कहा कि वे उसे ब्रिटिश राष्ट्रमंडल ही कहेंगे क्योंकि वे 'ब्रिटिश' विशेषण को पसंद करते हैं। यदि ब्रिटिश सरकार और राष्ट्रमंडल भी इस पर जोर नहीं देता है कि भारत 'अधिराज्य' कहा जाये तो हम 'अधिराज्य' शब्द का इसी समय क्यों न परित्याग कर दें। सम्मेलन में मि. एटली ने यह कहा था कि राष्ट्रमंडल के देश अपना जो नाम चाहे रखें। इसलिये मेरे विचार में हमें

इसकी स्वतंत्रता है कि हम अपने देश का जो नाम चाहें रखें। मेरे विचार से हम आज भी 'अधिराज्य' शब्द का परित्याग कर सकते हैं और अपने देश का नाम 'भारतीय संघ' अथवा कुछ और रख सकते हैं। यदि हम राष्ट्रमंडल के प्रधानमंत्रियों के सम्मेलन की कार्यवाही को तथा इस सभा में हमारे प्रधानमंत्री ने जो कुछ कहा है उसे ठीक समझ पाये हैं तो हमारे सामने कोई ऐसा सांविधानिक प्रतिबन्ध नहीं है जिसके अधीन हम अपने देश को अधिराज्य ही कहें। इसलिये श्रीमान्, सांविधानिक औचित्य की दृष्टि से अथवा भाषा को सुस्पष्ट बनाने के लिये मेरे विचार से लाभप्रद यही होगा और बुद्धिमानी भी इसी में होगी कि इस अनुच्छेद में संशोधन किया जाये। राष्ट्रमंडल सम्मेलन की कार्यवाही के अनुसार ही इसमें संशोधन होना चाहिये। हम आज भी अपने देश का नाम भारत रख सकते हैं अथवा सभा जिस नाम के सम्बन्ध में निश्चय करे वह नाम रख सकते हैं। इसलिये सभी बातों पर विचार करने के पश्चात् मैं इस निर्णय पर पहुंचा हूं कि इस अनुच्छेद के कारण बहुत सी कठिनाइयां उत्पन्न हो जायेंगी। मेरे विचार से समझदारी की बात यही है कि इस समय सभा इसे स्थगित रखे और आगे चल कर किसी उपयुक्त अवसर पर इस पर विचार करे। उस समय हम इस पर अधिक विस्तार से विचार कर सकेंगे। इसलिये श्रीमान्, मेरा यह प्रस्ताव है कि इस अनुच्छेद को तथा इस संशोधन को स्थगित रखा जाये और आगे चल कर किसी समय इन पर विचार किया जाये।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** अध्यक्ष महोदय, मैं यह समझ नहीं पाया हूं कि इस अनुच्छेद को अपने संविधान में प्रविष्ट करना आवश्यक है या नहीं। उसमें यह कहा गया है कि नवीन भारत सरकार और राज्यों की सरकारें भारत अधिराज्य की सरकार की उत्तराधिकारिणी होंगी। श्रीमान्, प्रस्तावना में हमने यह कहा है कि हम भारत के लोग इस संविधान को अपने को आत्मार्पित करते हैं। इस दशा में मेरी समझ में नहीं आता कि यह कहना किस प्रकार आवश्यक है कि हम भारत अधिराज्य की सरकार के उत्तराधिकारी हैं मेरे विचार से हमारे संविधान में इस अनुच्छेद की कोई आवश्यकता नहीं है। इसके अतिरिक्त, जैसा कि मेरे मित्र बता चुके हैं, इस अनुच्छेद की शब्दावली में परिवर्तन करने की तथा इस अनुच्छेद पर फिर से विचार करने की आवश्यकता है। जैसा कि श्री सन्तानम् ने कहा है प्रान्तों में बहुत परिवर्तन हो गये हैं और इसलिये इन परिवर्तनों को यथोचित स्थान देने के लिये कोई उपबन्ध होना चाहिये। मैं इस अनुच्छेद की अन्तिम पांच पंक्तियों का उद्देश्य भी नहीं समझ पाया जिनमें कहा गया है ''किये हुए अथवा किये जाने वाले समायोजन के अधीन आदि''। यदि इस पदावली से कोई अतिरिक्त विधि सम्बन्धी अधिकार प्रदान होता है तो मैं कह नहीं सकता किन्तु मैं यह चाहता हूं कि डा. अम्बेडकर यह बतायें कि यदि यह अनुच्छेद निकाल दिया जाये तो इसका क्या प्रभाव होगा। क्या इसका अर्थ यह होगा कि इस संविधान के अधीन जो नई सरकार अस्तित्व में आयेगी वह वैध होगी और वह भारत अधिराज्य की वर्तमान सरकार की उत्तराधिकारिणी न होगी? मैं यह चाहता हूं कि इस अनुच्छेद के आशय की यथोचित रूप से व्याख्या की जाये। मेरा अपना यह विचार है कि इसकी कोई आवश्यकता नहीं है और इसे संविधान में समाविष्ट न करना चाहिये।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): अध्यक्ष महोदय, यद्यपि मेरी यह इच्छा रही है कि मैं इस अनुच्छेद के सम्बन्ध में अपने मित्र श्री कामत और

[श्री आर.के. सिधवा]

प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना की आपत्तियों को समझूं किन्तु जब उन्होंने इस अनुच्छेद के संविधान का अंग बनाने के सम्बन्ध में ही आपत्ति की तो मैं उनके तर्क को ठीक-ठीक नहीं समझ पाया। यह अनुच्छेद सुस्पष्ट है और इसमें यह कहा गया है कि आगामी भारत सरकार इस समय की भारत अधिराज्य की सरकार की उत्तराधिकारिणी होगी। मेरे मित्र श्री कामत चाहते हैं कि 'अधिराज्य' शब्द न रहने दिया जाये और उसके स्थान में 'राष्ट्रमंडल' शब्द रखा जाये।

***श्री एच.वी. कामत:** मैंने कहा था, ''भारतीय गणराज्य की अथवा भारतीय संघ की सरकार'', मेरे मित्र श्री सिधवा उसे ठीक नहीं सुन पाये।

***श्री आर.के. सिधवा:** किन्तु आप बराबर राष्ट्रमंडल की ही चर्चा कर रहे थे और यह कह रहे थे कि राष्ट्रमंडल सम्बन्धी संकल्प पर भाषण देते हुए पंडित जवाहरलाल नेहरू ने क्या कहा। आगे चल कर चाहे जो कुछ भी हो किन्तु इस समय भारत अधिराज्य ही है। इसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता। इसलिये इस अनुच्छेद में कहा गया है कि वर्तमान सरकार की जो भी सम्पत्ति होगी वह नवीन सरकार को स्वत: प्राप्त हो जायेगी। यह आवश्यक है कि इसका उल्लेख हो अन्यथा विधि सम्बन्धी आपत्तियां की जा सकती हैं। यही अन्तिम पंक्तियों के सम्बन्ध में भी कहा जा सकता है। सब बातें स्पष्ट कर दी गई है। यह दूसरी बात है कि इस अनुच्छेद को प्रविष्ट करना आवश्यक समझा जाये या अनावश्यक। मेरी अपनी यह धारणा है कि अपनी स्थिति सुदृढ़ बनाने के लिये यह आवश्यक है कि इस प्रकार के अनुच्छेद को स्थान दिया जाये। इसलिये मैं इस अनुच्छेद का समर्थन करता हूं।

***श्री महावीर त्यागी** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): श्रीमान्, हमने राष्ट्रमंडल में रहने का करार किया है और इसलिये मेरे विचार से ''अधिराज्य'' शब्द पर कोई आपत्ति न होनी चाहिये। मेरे माननीय मित्र श्री कामत उस नारी की कहावत को चरितार्थ कर रहे हैं जो विवाहित होने पर भी कुंवारी ही कहलाना चाहती है। यदि आप राष्ट्रमंडल में सम्मिलित हो गये हैं तो ''अधिराज्य' शब्द से पीछा छुड़ाने से क्या लाभ होगा? इस स्थिति में मैं तो यह चाहता हूं कि हमारा देश सच्चे अर्थ में अधिराज्य कहा जाता। यह निश्चय कहीं अच्छा होता। किन्तु अब हम यह निश्चय कर चुके हैं कि हम राष्ट्रमंडल में रहेंगे और इसलिये हमें अपने देश को अधिराज्य कहने में लज्जा का अनुभव न करना चाहिये। अपने देश को ''अधिराज्य'' कहना उस स्थिति से कहीं अच्छा है जबकि वह न तो अधिराज्य ही रहे और न स्वतंत्र ही। इसलिये मेरे विचार से इन शब्दों पर आपत्ति न की जानी चाहिये।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर** (मद्रास : जनरल): अध्यक्ष महोदय, सिद्धान्तत: न तो अनुच्छेद 270 पर आपत्ति की जा सकती है और न प्रस्तावित संशोधन पर। पहले की सरकार के पूरे दायित्व को उत्तराधिकारिणी सरकार को ग्रहण करना ही होगा। किन्तु मैं यह कहना चाहता हूं कि इसका अवसर तब आयेगा जब समाविष्ट होने वाले राज्य प्रान्तों में अथवा राज्यों में समाविष्ट हो जायें। उस समय अधिकारों तथा आभारों के समायोजन के लिये अनुच्छेद 270 में कुछ रूपभेद करने की आवश्यकता होगी क्योंकि किसी एकक के सम्बन्ध में उत्तराधिकारिणी सरकार केवल पुराने प्रान्त की सरकार नहीं होगी किन्तु उस प्रान्त को तथा समाविष्ट होने वाले प्रदेश को मिलाकर जो राज्य बनेगा उसकी सरकार

होगी। इसलिये पहले के आभारों के सम्बन्ध में बाद को आवश्यक समायोजन करना होगा। अनुच्छेद 270 में जो सिद्धान्त सन्निहित है उसके सम्बन्ध में कोई आपत्ति नहीं की जा सकती है, भले ही हमारी योजना के फलीभूत होने पर अथवा एककों और समाविष्ट राज्यों की स्थिति के सम्बन्ध में निर्णय करने के पश्चात् उसमें कुछ रूपभेद करने की आवश्यकता पड़े। इन शब्दों के साथ मैं इस अनुच्छेद का तथा तत्सम्बन्धी संशोधन का समर्थन करता हूं।

***श्री एस.वी. कृष्णमूर्ति राव** (मैसूर राज्य): अध्यक्ष महोदय मैं इस अनुच्छेद को केवल इस कारण स्थगित रखने के पक्ष में नहीं हूं कि राज्यों की स्थिति अभी सुस्पष्ट नहीं हुई है। वास्तव में उपबन्ध इस प्रकार है, ''इस समय प्रथम अनुसूची के भाग 1 में उल्लिखित .....''। सभा ने अभी प्रथम अनुसूची को स्वीकार नहीं किया है और जब तक वह इस अनुसूची को स्वीकार करेगी तब तक यह स्पष्ट हो जायेगा कि प्रत्येक राज्य की रूप रेखा क्या है? जैसा कि श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर कह चुके हैं; केवल इस कारण इस अनुच्छेद को स्थगित न किया जाना चाहिये। इसलिये मैं इस संशोधन का समर्थन करता हूं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** अध्यक्ष महोदय, इस अनुच्छेद को इस समय स्वीकार करने के सम्बन्ध में इस सभा के मेरे माननीय मित्रों ने जो आपत्तियों की हैं उन्हें मैंने ध्यानपूर्वक सुना है और यह भी देखा है कि इसे किस प्रकार उपस्थित किया गया है। श्रीमान्, यद्यपि ये आपत्तियां तर्कसंगत थी किन्तु मेरे विचार से हम न इन्हें स्वीकार कर सकते हैं और न इस अनुच्छेद पर विचार-विमर्श स्थगित कर सकते हैं, क्योंकि इस अनुच्छेद में तथाकथित भारतीय राज्यों की आस्तियों, ऋणों, अधिकारों और दायित्वों के सम्बन्ध में जो उपबन्ध हैं वे अभी सुनिश्चित नहीं हो पाये हैं क्योंकि इनमें से कई राज्य प्रान्तों में समाविष्ट हो गये हैं अथवा समाविष्ट होने वाले हैं अथवा प्रान्तों के समान संघ में समाविष्ट होना चाहते हैं। यह हो सकता है कि परीक्षा करने पर यह ज्ञात हो कि जो राज्य संघ में एककों के रूप में समाविष्ट हो रहे हैं उनकी आस्तियों तथा दायित्वों को ग्रहण करने में कोई बुद्धिमानी नहीं है। यह भी हो सकता है कि जो राज्य प्रान्तों में समाविष्ट हो गये हैं उनकी सरकारों की स्थिति ऐसी न हो कि हम उनके दायित्वों को ग्रहण करना पसंद करें क्योंकि हम यह न जान पायेंगे कि वे दायित्व क्या हैं? हम किसी ऐसे प्रशासन की आस्तियों तथा दायित्वों को स्वीकार नहीं कर सकते हैं, जिसका समुचित रूप से संचालन न होता रहा हो क्योंकि उनके सम्बन्ध में हम यह न जान सकेंगे कि हमारा उत्तरदायित्व क्या है? इसलिये जिस समय देशी राज्यों को भारत के मानचित्र में स्थान दिया जायेगा उस समय पूर्ण स्थिति पर फिर से विचार करना होगा। इसके अतिरिक्त श्रीमान्, यह भी संभव है कि जब तक संविधान प्रवर्त्तन में आयेगा तब तक कुछ अन्य राज्य इस समय प्रांत कहे जाने वाले प्रदेशों में समाविष्ट हो जायेंगे। भारत की वर्तमान स्थिति को देखते हुए यह कहने से कोई लाभ नहीं है कि ऐसे मामलों में जिनके सम्बन्ध में हमें निश्चित सूचना प्राप्त है और हम पहले के प्रशासन को तथा उसकी आस्तियों और दायित्वों को अपने हाथ में लेने के लिये कार्यप्रणाली निर्धारित कर सकते हैं, केवल इस कारण कोई कदम नहीं उठायेंगे कि कुछ अन्य राज्यों के सम्बन्ध में हमें पूर्ण सूचना प्राप्त नहीं हैं। इसके साथ मैं इस सभा के माननीय सदस्यों को यह भी बताना चाहता हूं कि हमें सविधान के निर्माता होने के नाते राज्यों के प्रश्न से बहुत सर दर्द है। यह हो सकता है कि हमें प्रथम अनुसूची

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

के भाग 3 के राज्यों के अध्याय को इस समय छोड़ देना पड़े और उसे संविधान के अन्तिम रूप देने के एक सप्ताह अथवा पन्द्रह दिन पूर्व उठाने का निश्चय करना पड़े क्योंकि उसी समय हम उस अध्याय में उस समय की स्थिति का समावेश कर सकेंगे और प्रान्तों के समान जो राज्य संघ में समाविष्ट हुए हैं उनके लिये विनियम बना सकेंगे तथा जो राज्य प्रान्तों में समाविष्ट हो गये हैं उनकी यथोचित व्यवस्था कर सकेंगे और प्रासंगिक तथा आनुषंगिक उपबन्धों को संविधान में स्थान दे सकेंगे। इस पर भी यह सम्भव है कि हमें कुछ राज्यों को छोड़ना पड़े। जो कठिनाइयां हमारे सम्मुख उपस्थित हैं उनका वर्णन करने से कोई लाभ न होगा क्योंकि जो कोई व्यक्ति विभिन्न प्रसंविदाताओं को तथा राज्य मंत्रणालय से इन राज्यों की स्थिति के सम्बन्ध में समय-समय पर प्रकाशित दस्तावेजों की देखेगा उसे ज्ञात हो जायेगा कि ये कठिनाइयां क्या हैं। किन्तु मेरे विचार से केवल इसी कारण ऐसे अनुच्छेदों पर विचार स्थगित न करना चाहिये जो उनमें उल्लिखित प्रदेशों के प्रयोजन के लिये सम्पूर्ण है। आगे जो परिवर्तन करने हों उन्हें एक विशेष अध्याय में विशेष उपबन्धों द्वारा समाविष्ट किया जा सकता है। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि परिवर्तन दिन प्रतिदिन होंगे और संविधान जब तक पूरा होगा तब तक कई परिवर्तन हो जायेंगे। मुझे इस सम्बन्ध में कोई सन्देह नहीं है कि डा. अम्बेडकर उन माननीय सदस्यों के आभारी हैं जिन्होंने इस अनुच्छेद की कमी की ओर ध्यान आकृष्ट किया है और मुझे विश्वास है कि उन्हें भी इसका ध्यान है। संविधान को अन्तिम रूप से स्वीकार करने के पूर्व स्थित्यनुकूल कार्य करने के लिये यथोचित उपबन्ध रखे जायेंगे और इसलिये श्रीमान्, मेरे विचार से इस अनुच्छेद को इस समय स्वीकार कर लेना चाहिये।

***श्री महबूब अली बेग साहिब** (मद्रास : मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, मुख्य प्रश्न यह है कि क्या इस अनुच्छेद से भावी भारत सरकार को तथा प्रान्तों को पुराने संविधान के अधीन, अर्थात् 1935 के संविधान के अधीन, ब्रिटिश भारत की आस्तियों तथा दायित्वों को ग्रहण करने का ही नहीं बल्कि राज्यों का अथवा तथाकथित देशी राज्यों के उत्तराधिकारी होने का भी अधिकार प्राप्त हो जायेगा या नहीं?

श्रीमान्, यहां यह शब्दावली प्रयुक्त है कि भावी भारत सरकार तथा राज्यों की सरकारें भारत अधिराज्य की तथा भारत सरकार के 1935 के अधिनियम में उल्लिखित राज्यपालों के प्रान्तों की उत्तराधिकारिणी होंगी। भारत सरकार के 1935 के अधिनियम के अधीन राज्यों को अलग रखा गया था और भारत अधिराज्य तथा राज्यपालों के प्रान्तों में कोई भी देशी राज्य सम्मिलित नहीं थे। इसलिये यदि आप अनुच्छेद 270 को केवल इतने ही तक सीमित रख रहे हैं कि भावी भारत सरकार और राज्यों की सरकारें भारत अधिराज्य की तथा राज्यपालों के प्रांतों की उत्तराधिकारिणी होंगी तो यह स्पष्ट है कि भावी भारत सरकार तथा राज्यों की सरकारें समाविष्ट तथा समाविष्ट होने वाले राज्यों की उत्तराधिकारिणी न होंगी। अनुच्छेद 270 का यही स्पष्ट निर्वचन किया जा सकता है। इसलिये इस अनुच्छेद 270 में कोई ऐसा वाक्य अथवा पदावली प्रविष्ट की जानी चाहिये जिसके अधीन भावी भारत सरकार को तथा राज्यों की सरकारों को न केवल 1935 के अधिनियम के अधीन

ब्रिटिश भारत का बल्कि उस राज्य अथवा राज्यों का भी उत्तराधिकार प्राप्त हो सके जो संघ में समाविष्ट होंगे। अन्यथा भारत सरकार को और भावी प्रान्तों को राज्यों का उत्तराधिकार प्राप्त न होगा। इसलिये इस अनुच्छेद को यथोचित रूप से संशोधित करना आवश्यक है और जब तक उसे संशोधित न किया जायेगा, उसमें यह बहुत बड़ा दोष बना रहेगा।

***श्री बी. दास** (उड़ीसा : जनरल): श्रीमान्, हम उस अध्याय पर विचार कर रहे हैं, जिसमें पहले की भारत सरकार के, वर्तमान भारत सरकार के तथा इस संविधान द्वारा अस्तित्व में आने वाली भावी भारत सरकार की सम्पत्ति, संविदाओं, दायित्वों और व्यवहार-वादों का वर्णन है। इसलिये जब मेरे मित्र श्री कामत ने 'राष्ट्रमंडल' शब्द का उच्चारण किया तो मैं कुछ असमंजस में पड़ गया। श्रीमान्, मुझे स्वयं राष्ट्रमंडल से कोई प्रेम नहीं है। किन्तु जहां तक मैं राष्ट्रमंडल के निर्वचन को समझ पाया हूं, उसका कोई अस्तित्व नहीं है, उसकी कोई सम्पत्ति नहीं है, उसका कोई सचिवालय नहीं है। उसका एक काल्पनिक, अस्पष्ट प्रमुख है जो इंग्लिस्तान का सम्राट है। इसलिये राष्ट्रमंडल का कोई प्रश्न नहीं उठता।

स्वतंत्रता अधिनियम के अधीन वर्तमान सरकार भारत-अधिराज्य की सरकार है और सम्भवत: उसे पुरानी ब्रिटिश सरकार की सब सम्पत्ति दायभाग के रूप में मिली है और सम्पत्ति तथा आस्तियों के सम्बन्ध में गवर्नर जनरल ने उसे स्वविवेक से प्रयोग में आने वाली कुछ शक्तियां प्रदान की हैं किन्तु मैं देखता हूं कि इंग्लिस्तान की सरकार से हमारे सम्बन्धों का इसमें कोई उल्लेख नहीं है। इंग्लिस्तान की सरकार ने अभी भारत अधिराज्य की सरकार को सब सम्पत्ति नहीं सौंपी है। यह कहा जा सकता है कि एक समिति की बैठक हो रही है और वह पहले के इंडिया आफिस की आस्तियों का बंटवारा कर रही है। किन्तु इस संविदा के वित्तीय अंग का कोई उल्लेख नहीं किया गया है। क्या इंडिया आफिस की इमारत भारत को दे दी जायेगी? इंग्लिस्तान को भारत का 6 करोड़ का पौंड पावना चुकाना है। यह कहा जा सकता है कि हम उसे किसी दिन भी ले सकते हैं। किन्तु मुझे इसका विश्वास नहीं हैं यदि हम 6 करोड़ पौंड पावने की पूरी धनराशि इंग्लिस्तान से वसूल करना चाहते हैं तो उसका हमारे संविधान में उल्लेख क्यों नहीं किया गया है? अमेरीका में तथा इंग्लिस्तान में भी पौंड के अवमूल्यन पर बहुत मत प्रकाशित हो रहा है। यदि पौंड का अवमूल्यन हुआ तो हमें अपने धन के कुछ अंश से हाथ धोना पड़ेगा। हम अपने संविधान में उन आस्तियों के सम्बन्ध में एक अनुच्छेद प्रविष्ट क्यों न करें जो इंग्लिस्तान को भारत को चुकानी है? क्या इस धन के सम्बन्ध में जिसे इंग्लिस्तान ने बहुत कुछ बलपूर्वक प्राप्त किया है और जिसे वह किसी न किसी प्रकार हजम कर जाना चाहता है, क्या इंग्लिस्तान और भारत के बीच कोई संविदा हुई है? इस समय विश्व स्थिति ऐसी है कि इंग्लिस्तान यह घोषित नहीं कर सकता कि उसने यह ऋण समाप्त कर दिया है। संविधान की इस कमी की ओर मसौदा-समिति को ध्यान देना चाहिये। मेरी समझ में नहीं आता कि इंग्लिस्तान के विषय में वह केवल इस कारण संकोच का अनुभव क्यों करती है कि कुछ समय पूर्व सम्राट की सरकार भारत पर शासन करती थी अथवा इसलिये कि अगली जनवरी तक हमारा देश परिस्थितिवश अधिराज्य रहेगा? मेरे विचार से इंग्लिस्तान ने जो 6 करोड़ पौंड की धनराशि चुकानी है उसकी गणना रुपयों में करके उसका संविधान

[श्री बी. दास]

में उल्लेख होना चाहिये। यदि पौंड का 20 प्रतिशत अवमूल्यन हुआ तो हम 12 करोड़ पौंड की धनराशि खो बैठेंगे। इसलिये मेरा यह कहना है कि इंग्लिस्तान को हमें जो ऋण चुकाना है उसका इस संविधान में किसी स्थल पर उल्लेख होना चाहिये, यद्यपि यह आवश्यक नहीं है कि इसका उल्लेख 270 से लेकर 274 तक के अनुच्छेदों में ही हो। केवल इसलिये कि इंग्लिस्तान पहले आक्रमणकारी रहा है और आगे भी आक्रमणकारी हो सकता है, हमें उससे किसी प्रकार का भय न होना चाहिये और न उसके सम्बन्ध में संकोच का ही अनुभव करना चाहिये।

***श्री वी.एस. सर्वटे** (मध्य भारत): अध्यक्ष महोदय, उन राज्यों के सम्बन्ध में, जो प्रांतों में समाविष्ट हो गये हैं, मेरे विचार से कोई कठिनाई नहीं है। जो शब्दावली प्रयुक्त है वह इस प्रकार है, ''इस संविधान के प्रवर्तन में आने पर''। यदि संविधान 26 जनवरी, 1950 को प्रवर्तन में आया तो उस तिथि को राज्यपालों के प्रान्त समाविष्ट भारतीय राज्यों के साथ प्रान्तों के रूप में अस्तित्व में आयेंगे। ये प्रान्त 26 जनवरी, 1950 को जो प्रान्त अस्तित्व में थे, उनके उत्तराधिकारी होंगे। बंबई में बड़ोदा भी सम्मिलित रहेगा इसलिये संविधान के प्रवर्तन में आने के पूर्व जो राज्य समाविष्ट हो चुके हैं उनके सम्बन्ध में कोई कठिनाई न होगी।

मेरे विचार से तो एक अन्य प्रकार की कठिनाई उपस्थित होगी। इस अनुच्छेद में तथ्य को विधिसंगत भाषा में व्यक्त किया गया है। जब भारत स्वतंत्र घोषित किया गया था तो उसे पहले की सरकार की सम्पत्ति, आस्तियां और दायितव उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त हो गये थे। यह एक तथ्य है। मैं यह पूछता हूं कि क्या इस तथ्य को विधि की भाषा में व्यक्त करना आवश्यक है? मैं यह प्रश्न इसलिये उठा रहा हूं कि शब्दावली इस प्रकार है कि 'वह सभी दायित्वों और आस्तियां की उत्तराधिकारिणी होगी।' यदि पहले की सरकार ने किसी व्यक्ति को, 1942 के दंगे में उसकी सेवा करने के लिये कोई निवृत्ति वेतन दिया हो अथवा जागीर के रूप में कुछ भूमि दी हो और आने वाली सरकार का यह विचार हो कि यह जागीर न दी जानी चाहिये थी अथवा इस प्रकार के उपहार से राष्ट्रीय हितों का हनन हुआ है तो क्या इस अनुच्छेद के अधीन उस सरकार पर इसका दायित्व होगा कि वह इस प्रकार के उपहार को रहने दे? मैं यह जानना चाहता हूं कि क्या इस खण्ड के कारण आने वाली सरकारों पर, उन सभी बातों को बनाये रखने का दायित्व होगा, जिनसे राष्ट्रीय हितों का हनन हुआ है। तो क्या इस अनुच्छेद के अधीन उस सरकार पर इसका दायित्व होगा कि वह इस उपहार को रहने दे। इसलिये मैं यह जानना चाहता हूं कि इन दायित्वों की गणना में क्या आने वाली सरकार बन्धन में तो नहीं पड़ जायेगी? यदि यह अनुच्छेद निकाल दिया जाये तो इसका क्या प्रभाव होगा? मेरे विचार से इस समय सरकार की जो प्रतिष्ठा है वह इससे कम न होगी, भले ही विधिवेत्ताओं का भिन्न विचार हो। तथ्य यह है कि वर्तमान सरकार पहले की सरकार की उत्तराधिकारिणी है। अन्य अनुच्छेदों की बात दूसरी है। यदि कोई सम्पत्ति सम्पदा (जागीर) का रूप धारण कर ले तो क्या होगा? मेरे विचार से संविधान में इस तथ्य के उल्लेख की आवश्यकता नहीं है कि कोई सरकार पहले की सरकार की उत्तराधिकारिणी है।

दूसरी बात, जो मैं सभा के सम्मुख रखना चाहता हूं, यह है कि क्या यह आवश्यक है कि संविधान जिन सिद्धान्तों पर आधृत हो उन सब का उल्लेख संविधान में हो? यह केवल विधि सम्बन्धी बुद्धिवाद ही है। क्या इन सब बातों को संविधान में स्थान देने की आवश्यकता है? संसद एक ऐसी पृथक विधि स्वीकार कर सकती है, जिसमें यह कहा गया हो कि वर्तमान सरकार पहले की सरकार के दायित्वों को ग्रहण करती है। मैं चाहता हूं कि इसे भी स्पष्ट कर दिया जाये कि दायित्व और आभार में क्या अन्तर है। एक साधारण व्यक्ति तो यह समझता है कि दायित्वों में आभार भी सम्मिलित है। इसलिये 'आभार' शब्द को प्रयोग करना कहां तक उचित है? इन कतिपय बातों को मैं सभा के सम्मुख रखना चाहता हूं और मैं यह चाहता हूं कि इनका स्पष्टीकरण किया जाये।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** अध्यक्ष महोदय, मैं नहीं समझता था कि इस अनुच्छेद पर इतना वाद-विवाद होगा। किन्तु चूंकि वाद-विवाद हुआ है, इसलिये मैं यह आवश्यक समझता हूं कि जिस भ्रम अथवा संदेह की ओर संकेत किया गया है, अथवा जो कठिनाइयां बताई गई हैं, उन्हें दूर करने के उद्देश्य से मैं कुछ शब्द कहूं।

पहला प्रश्न यह उठाया गया है कि अनुच्छेद 270 को संविधान में प्रविष्ट करने की आवश्यकता ही क्या है? इसका बहुत सीधा-सादा उत्तर है। माननीय सदस्यों को यह स्मरण होगा कि 1935 के अधिनियम के प्रवर्तन में आने के पूर्व भारत सरकार की आस्तियों, दायित्वों तथा सम्पत्ति के सम्बन्ध में प्राधिकार एक निगम को प्राप्त था जो सपरिषद्-सचिव के नाम से कहा जाता था। सपरिषद्-सचिव को ही भारत का सब राजस्व तथा सम्पत्ति प्राप्त थी और उस पर भारत सरकार के सभी आभारों का दायित्व भी था। 1935 के पहले भारत सरकार एक सत्तात्मक सरकार थी। भारत सरकार की अथवा प्रान्तों की कोई सम्पत्ति नहीं थी। सब सम्पत्ति उस निगम की थी जो सपरिषद्-सचिव के नाम से कहा जाता था। उसके विरुद्ध व्यवहार-वाद उपस्थित किया जा सकता था और वह स्वयं व्यवहार-वाद उपस्थित कर सकता था। 1935 के भारत सरकार के अधिनियम द्वारा एक बहुत सारभूत परिवर्तन किया गया अर्थात् उसके अधीन भारत सरकार की ओर से सपरिषद्-सचिव को प्राप्त आस्तियां और दायित्व दो भागों में विभाजित किये गये अर्थात् भारत सरकार को बांट में दी हुई और उसके नाम पर अलग रखी हुई आस्तियां और दायित्व और प्रान्तों के नाम पर अलग रखी हुई आस्तियां और दायित्व। यह सच है कि चूंकि भारत सरकार पर भारत सचिव का अधिकार पूर्णतया समाप्त नहीं हुआ था इसलिये भारत सरकार को तथा विभिन्न प्रान्तों को बांट में दी हुई सम्पत्ति भारत सरकार के अधिनियम की तद्विषयक धारा में इस प्रकार वर्णित की गई थी कि उसका स्वामित्व भारत सरकार की ओर से तथा विभिन्न प्रान्तों की ओर से सम्राट को प्राप्त होगा। इसके साथ ही तथ्य यह है कि दायित्व, आस्तियां और सम्पत्ति विभाजन की गई और विभिन्न एककों तथा केन्द्र में भारत सरकार के नाम पर रखी गई। अब हमें यह समझना है कि इस संविधान को पारित करने का क्या प्रभाव होगा। इस संविधान के पारित होने से 1935 के भारत सरकार के अधिनियम का विरसन तथा निराकरण हो जायेगा। यदि आप निरसित अधिनियमों

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

की अनुसूची को देखें तो आपको ज्ञात होगा कि उसमें 1935 के भारत सरकार के अधिनियम का भी उल्लेख है। यह स्पष्ट है कि जब आप भारत सरकार के अधिनियम का निरसन करने जा रहे हैं; जिसमें आस्तियों, दायित्वों और सम्पत्ति के लिये उपबन्ध हैं, तो आपको संविधान में किसी स्थल पर इसका उल्लेख करना होगा कि भले ही भारत सरकार के अधिनियम का निरसन हो गया हो किन्तु विभिन्न प्रान्तों की जो आस्तियां हैं वे उन्हीं की रहेंगी। अन्यथा 1935 के भारत सरकार के अधिनियम के निरसित होने पर आस्तियों और दायित्वों के सम्बन्ध में कोई उपबन्ध न रह जायेगा। वास्तव में हम वही कर रहे हैं जो किसी अधिनियम को निरसित करने पर साधारणतया किया जाता है। साधारणतया यही कहा जाता है कि यद्यपि अमुक-अमुक अधिनियम निरसित हो गये हैं किन्तु अमुक-अमुक कार्य उसी रूप में होते रहेंगे जैसे कि वे पहले होते थे। बस इतना ही किया जा रहा है। अनुच्छेद 270 में केवल यह कहा गया है कि यद्यपि 1935 के भारत सरकार के अधिनियम का निरसन हो गया है किन्तु केन्द्रीय सरकार के विभिन्न एककों की आस्तियां तथा दायित्व पहले के समान ही रहेंगे। दूसरे शब्दों में 1935 के अधिनियम के अधीन जो भारत सरकार थी और जो प्रान्त थे उनके ये एकक उत्तराधिकारी होंगे। मुझे आशा है कि अब सभा की समझ में आ गया होगा कि इस खण्ड को प्रविष्ट करना क्यों आवश्यक है।

अब मैं दूसरे प्रश्न को उठाता हूं। यह कहा गया है कि अनुच्छेद 270 में भारतीय राज्यों के दायित्वों, आस्तियों और सम्पत्ति का कोई उल्लेख नहीं है। दो मामले ऐसे हैं जिनमें विभेद करना आवश्यक है। पहले हमें उन भारतीय राज्यों को अलग श्रेणी में रखना है जो संविधान में तदरूप समाविष्ट किये जा रहे हैं और उनके क्षेत्र तथा उनके सम्बन्ध में किसी अन्य विषय के बारे कोई परिवर्तन नहीं किया जा रहा है। उदाहरणार्थ मैसूर राज्य को लीजिये, जो आज एक स्वतंत्र राज्य है। वह संविधान में सम्भवत: बिना किसी रूप भेद के समाविष्ट किया जायेगा। दूसरी श्रेणी उन राज्यों की है जो निकटवर्ती भारतीय प्रांतों में समाविष्ट हो गये हैं। तीसरी श्रेणी उन राज्यों की है जिन्होंने मिल कर बड़े संघ स्थापित कर लिये है परन्तु जो भारतीय प्रान्तों में समाविष्ट नहीं हुए हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि मैसूर राज्य के संविधान में अनुच्छेद 270 के अनुरूप एक इस आशय का उपबन्ध होगा कि मैसूर की वर्तमान सरकार की आस्तियां, दायित्व और सम्पत्ति नवीन सरकार को प्राप्त होंगी। इसलिये इस सम्बन्ध में अनुच्छेद 270 में उपबन्ध रखने की कोई आवश्यकता नहीं है। इसी प्रकार उन राज्यों की प्रसंविदा में, जिन्होंने संघ स्थपित किये हैं, अनुच्छेद 270 के समान ही उपबन्ध होगा। उनकी प्रसंविदा में यह कहा जा सकता है कि जिन राज्यों ने मिल कर एक नवीन राज्य का निर्माण किया है उनकी आस्तियां तथा दायित्व संघटित राज्य की आस्तियां और दायित्व होंगे।

अब अन्त में हम उन राज्यों के प्रश्न को उठाते हैं, जो प्रान्तों में समाविष्ट हो गये हैं उनके सम्बन्ध में अनुच्छेद 270 के कारण कोई कठिनाई नहीं उपस्थित हो सकती है। एक उदाहरण लीजिये। यदि कोई राज्य किसी भारतीय प्रान्त में समाविष्ट हुआ है तो यह स्पष्ट है कि समाविष्ट राज्य और निकटवर्ती प्रान्त के बीच इस सम्बन्ध में कोई करार हुआ होगा कि समाविष्ट राज्य के दायित्वों और आस्तियों के सम्बन्ध में क्या किया जायेगा।

उस करार में यह अवश्य तय किया जायेगा कि ये दायित्व समाप्त हो जायेंगे अथवा समाविष्ट राज्य या वह भारतीय प्रान्त, जिसमें वह राज्य समाविष्ट हुआ हो, इन दायित्वों का निर्वहन करेगा। इस अनुच्छेद में यह कहा गया है कि संविधान के प्रवर्तन में आने पर (ये शब्द महत्त्वपूर्ण है और इस समय मैं यह माने लेता हूं कि वह 26 जनवरी को प्रवर्तन में आयेगा) उस प्रान्त का, जिसमें कोई राज्य समाविष्ट हुआ हो, यह दायित्व होगा कि वह उस करार का निर्वहन करे जो उसके तथा समाविष्ट राज्य के बीच हुआ हो यदि संविधान के प्रवर्तन में आने के पूर्व कोई करार न हुआ हो तो केन्द्रीय सरकार तथा प्रान्तीय सरकारों को इसकी स्वतंत्रता होगी कि वे उस एकक अथवा समाविष्ट राज्य अथवा किसी अन्य एकक के सम्बन्ध में जो भी नये आभार चाहे स्वीकार करे। इसलिये संविधान के प्रवर्तन में आने के पश्चात् जो भी आदान-प्रदान होगा वह उस करार के अनुसार होगा, जिसे प्रान्त संविधान के अधीन स्वतंत्रता से कर सकेंगे। इसलिये इस सम्बन्ध में कोई उपबन्ध रखने की आवश्यकता नहीं है। अन्य राज्यों के सम्बन्ध में, जैसा कि मैं मैसूर के बारे में कह चुका हूं, उन्हें इसकी स्वतंत्रता होगी कि वे अपना प्रबन्ध स्वयं करें। जब वह प्रबन्ध कर लिया जायेग तो हम निस्संदेह उसका उस विशेष भाग में उल्लेख करेंगे जिसे हम भाग 3 के राज्यों के विशेष उपबंधों के संबंध में संविधान में प्रविष्ट करने वाले हैं इसलिये जहां तक अनुच्छेद 270 का सम्बन्ध है, मेरे विचार से उसके कारण कोई कठिनाई न होगी। मेरे विचार से उसे उसके वर्तमान रूप में ही स्वीकार कर लेना चाहिये।

***श्री महावीर त्यागी:** क्या मैं यह जान सकता हूं कि जिस करार का निर्देश किया गया है वह केवल वित्तीय करार ही है अथवा क्षेत्र सम्बन्धी करार भी है।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** उसका सम्बन्ध आस्तियों, दायित्वों और आभारों से है। उदाहरणार्थ यदि किसी प्रांत ने किसी राज्य को समाविष्ट किया है और वहां के नरेश को कोई निवृत्ति वेतन देने का आभार स्वीकार किया है तो अनुच्छेद 270 के अधीन वह आभार समझा जायेगा। क्षेत्र के संक्रमण के सम्बन्ध में अन्य उपबन्ध होंगे।

***श्री एच.वी. कामत:** क्या मैं जान सकता हूं कि हाशिये के उपशीर्षक में 'अधिकार' शब्द को रखने पर भी अनुच्छेद से उसे क्यों निकाल दिया गया है?

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** मसौदा समिति इसकी ओर ध्यान देगी।

***श्री बी. दास:** भारत की विदेशों में विशेषकर इंग्लिस्तान में जो सम्पत्ति है, क्या उनके सम्बन्ध में मैं यह जान सकता हूं कि उन्हें अनुच्छेद 270 के अधीन वर्णित सम्पत्ति में क्यों नहीं सम्मिलित किया गया है?

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** मेरे विचार से उस सम्पत्ति का, उदाहरणार्थ इंडिया आफिस के पुस्तकालय आदि का, भारत और पाकिस्तान के बीच विभाजन होना है और मेरे विचार से इस सम्बन्ध में बातचीत हो रही है।

***श्री बी. दास:** पौंड पावने का क्या होगा?

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** मेरे माननीय मित्र को उसके सम्बन्ध में मुझ से अधिक जानकारी है।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''संशोधनों की सूची के संशोधित संख्या 2975 और 2976 के सम्बन्ध में, अनुच्छेद 270 में 'assets and liabilities' (आस्तियां और दायित्व) शब्दों के स्थान में 'assets, liabilities and obligations' (आस्तियां, दायित्व और आभार) शब्द रखे जायें।''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 270, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 270, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया गया।

अनुच्छेद 271

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

''अनुच्छेद 271 में–

(1) दो स्थलों पर जहां 'for the purposes of the Government of that State' (उस राज्य की सरकार के प्रयोजनों के लिये) शब्द प्रयुक्त हैं, वे निकाल दिये जायें)

(2) दो स्थलों पर जहां ''for the purposes of the Government of India' (भारत सरकार के प्रयोजनों के लिए) शब्द प्रयुक्त हैं, वे निकाल दिये जायें।''

***श्री एच.वी. कामत:** श्रीमान्, मैं एक प्रश्न उठाना चाहता हूं कि जिसे एक साधारण प्रश्न कहा जा सकता है किन्तु मुझे आशा है कि डा. अम्बेडकर तथा उसके साथ काम करने वाली बुद्धिमानों की मंडली संविधान का अन्तिम मसौदा बनाते समय उसकी ओर ध्यान देगी। उपस्थित संशोधनों के साथ इस अनुच्छेद में प्रथम अनुसूची के भाग 3 में इस समय वर्णित राज्यों के अतिरिक्त भारत के अन्य राज्य क्षेत्र की सम्पत्ति का उल्लेख है। पहले मैंने जो प्रश्न उठाया था वह इस अनुच्छेद के सम्बन्ध में भी उठाया जा सकता है इसीलिये मैं यह सुझाव उपस्थित करना चाहता हूं कि जब तक हम प्रथम अनुसूची पर विचार-विमर्श न कर लें तब तक इन अनुच्छेदों को स्थगित रखें। इन अनुच्छेदों को स्वीकार करके फिर अनुसूची में परिवर्तन करने का कोई अर्थ न होगा। प्रथम अनुसूची से हमें ज्ञात हो सकता है कि उसके भाग 3 में कौन से राज्य उल्लिखित हैं जैसा कि मैं पहले कह चुका हूं, कई राज्यों का भारत के मानचित्र से लोप हो गया है और वे भारत राज्य क्षेत्र के अंग नहीं रह गये हैं। बड़ोदा, कोल्हापुर और मयूरभंज का अब प्रथम अनुसूची के भाग 2 में उल्लेख नहीं है। यदि हम इस अनुच्छेद को वर्तमान रूप में पारित करते हैं और विभिन्न राज्यों के सम्बन्ध में 'अनुसूची में रूप-भेद के अधीन' शब्दों का उल्लेख नहीं करते हैं तो बड़ोदा, कोल्हापुर और मयूरभंज जैसे राज्यों की सम्पत्ति का क्या होगा क्योंकि वे प्रान्तों में समाविष्ट हो चुके हैं? इसलिये मेरा यह सुझाव है कि इस अनुच्छेद को उस समय तक स्थगित रखा जाये जब तक कि प्रथम अनुसूची और तत्सम्बन्धी संशोधनों पर विचार न कर लिया जाये।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** श्रीमान्, श्री कामत महोदय ने जो विचार व्यक्त किये हैं उनमें मैं सहमत नहीं हूं। हम इन अनुच्छेदों को इस आशा से पारित कर रहे हैं कि अनुसूचियों में केवल वे बातें रखी जायेंगी, जिनके सम्बन्ध में ये अनुच्छेद प्रयुक्त होंगे। इन अनुसूचियों को हम अपनी इच्छा अनुसार बनायेंगे और उनमें केवल उन बातों को स्थान देंगे जो हमारे स्वीकार किये हुए इन अनुच्छेदों से सुसंगत होंगी। इसलिये मेरे विचार से अनुच्छेद 270 को संविधान का अंग बना लेना चाहिये। यह अनुच्छेद भी महत्त्वपूर्ण है। पहले हमारा देश कई राज्यों में विभक्त था। अब इस संविधान के अधीन देश के प्रत्येक भाग का शासन एक ही सरकार द्वारा होगा। इसलिये इस अनुच्छेद को केवल इस कारण स्थगित न रखना चाहिये कि अनुसूची में परिवर्तन करने की आवश्यकता है।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 271 में–

(1) दो स्थलों पर जहां 'for the purposes of the Government of that State' (उस राज्य की सरकार के प्रयोजनों के लिये) शब्द प्रयुक्त हैं, वे निकाल दिये जायें)

(2) दो स्थलों पर जहां ''for the purposes of the Government of India' (भारत सरकार के प्रयोजनों के लिए) शब्द प्रयुक्त हैं, वे निकाल दिये जायें।''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 271, संशोधित रूप में संविधान का अंग बना लिया जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 271, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया गया।

नवीन अनुच्छेद 271-क

***माननीय डा. बी.आर अम्बेडकर:** श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

''अनुच्छेद 271 के पश्चात् निम्नलिखित नवीन अनुच्छेद रखा जाये–

'271-A. All lands, minerals and other things of values lying within teritorial waters vest in the Union—All lands, minerals and other things of value underlying the ocean within the territorial waters of India shall vest in the Union and be held for the purposes of the Union.' "

(271-क. भूमियां, खनिज तथा अन्य मूल्यवान चीजें स्वयं में निहित होंगी—भारत के जल-प्रांगण में, समुद्र के नीचे की सब भूमियां, खनिज तथा अन्य भूमियां, खनिज तथा जल-प्रांगण में स्थित मूल्यवान चीजें संघ में निहित होंगी तथा संघ के प्रयोजन के लिये धारण की जायेंगी।)

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

यह एक बहुत महत्त्वपूर्ण अनुच्छेद है। हम भारत के राज्य-क्षेत्र में कई ऐसे राज्यों को समाविष्ट करने जा रहे हैं जो समुद्र तटवर्ती हैं। यह सम्भव है कि ये राज्य यह प्रश्न उठायें कि उनके जल-प्रांगण में समुद्र के नीचे की वस्तुएं उन्हीं की सम्पत्ति है। इस प्रकार के तर्क का खण्डन करने के लिये इस अनुच्छेद को प्रविष्ट करना आवश्यक है।

***श्री एच.वी. कामतः** श्रीमान्, मेरे माननीय मित्र को इस अनुच्छेद को स्पष्ट करना चाहिये था और उसके आशय तथा महत्त्व को समझाना चाहिये था। कम से कम मुझ जैसे साधारण व्यक्ति के लिये इस अनुच्छेद का अर्थ स्पष्ट नहीं है। उसमें भूमियों, खनिजों तथा अन्य मूल्यवान चीजों का उल्लेख है। प्रश्न यह है कि खनिजों के अतिरिक्त जिन चीजों को समुद्र के नीचे की मूल्यवान चीजें कहा गया है, वे ही सब चीजें भारत के जल-प्रांगण में स्थित हैं?

***अध्यक्षः** इसका सम्बन्ध केवल उन चीजों से है जो जल-प्रांगण में स्थित भूमि में पाई जायें।

***श्री एच.वी. कामतः** अनुच्छेद में उल्लेख है भूमियों, खनिजों तथा अन्य मूल्यवान चीजों का। प्रश्न यह है कि 'अन्य मूल्यवान चीजें' क्या हैं? क्या ये शब्द किसी अन्य संविधान से लिये गये हैं अथवा ये शब्द हमारे संविधान में बिना अधिक विचार किये हुए ही प्रविष्ट किये गये हैं? यदि ये बात अस्पष्ट रखी गई तो उच्चतम न्यायालय को इनके सम्बन्ध में निर्णय करना होगा। एक व्यक्ति जिस चीज को मूल्यवान समझता है उसे दूसरा व्यक्ति मूल्यवान नहीं समझ सकता है। क्या इस पदावली में मूल्यवान रत्न अथवा खनिज अथवा समुद्र की सतह के नीचे जो कुछ भी मिले, जैसे मछली इत्यादि, भी सम्मिलित है? कुछ लोग मछलियों को भी मूल्यवान समझ सकते हैं, किन्तु निरामिष लोग उनका कोई भी मूल्य न लगायेंगे। इस अनुच्छेद के मसौदे को फिर से लिखा जाना चाहिये और उसमें यह स्पष्ट करना चाहिये कि वे मूल्यवान चीजें क्या हैं जो प्राप्त होने पर संघ में निहित होंगी। यदि आप इस अनुच्छेद की वर्तमान शब्दावली को रहने देते हैं तो उनके आधार पर भी वकील कई प्रकार के विवाद उपस्थित करेंगे।

इसके अतिरिक्त अनुच्छेद में कहा गया है, ''भारत के जल-प्रांगण में, समुद्र के नीचे की सब भूमियां, खनिज तथा अन्य मूल्यवान चीजें।'' प्रथम अनुसूची में हमने राज्यों की तथा भारत राज्यक्षेत्र की परिभाषा की है। किन्तु इस अनुच्छेद में कहीं भी 'भारत के जल-प्रांगण' की परिभाषा नहीं की गई है। संविधान इस सम्बन्ध में मौन है।

***अध्यक्षः** अन्तर्राष्ट्रीय विधि में यह पदावली सुस्पष्ट है।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** इसकी पृथक रूप से परिभाषा करने की आवश्यकता नहीं है।

***श्री एच.वी. कामतः** यदि आप अनुसूची में भारत राज्य-क्षेत्र को परिभाषा करना आवश्यक समझते हैं तो संविधान में जल-प्रांगण की भी परिभाषा क्यों नहीं करते हैं? अन्तर्राष्ट्रीय

विधि के अधीन किसी देश के तट से तीन मील तक का समुद्र जल-प्रांगण समझा जाता है। जैसा कि अनुसूची के चार भागों में वर्णित है, हमारे कुछ क्षेत्रों को मिलाकर ही हमारे राज्य-क्षेत्र का निर्माण हुआ है। पूर्वी तट पर तथा पश्चिमी तट पर जल-प्रांगण की कोई सीमा होगी। हमारे तट से तीन मील से आगे का समुद्र जल-प्रांगण नहीं कहा जा सकता। यदि आप अंडमान और निकोबार द्वीपों को भारत के राज्यक्षेत्र के अन्तर्गत समझते हैं तो उनसे तीन मील से लेकर पांच मील तक का समुद्र हमारा जल-प्रांगण कहा जायेगा। समझदारी की बात यही होगी कि संविधान में स्पष्ट शब्दों में इसका उल्लेख किया जाये कि जल-प्रांगण का अर्थ क्या है? आजकल संसार मे नई-नई भूमियां खोज निकाली जा रही हैं। इन खोजों के कारण पेचीदगियां उत्पन्न हो सकती हैं। इसलिये हमें अपने जल-प्रांगण की परिभाषा कर देनी चाहिये।

जैसा कि मैं पहले कह चुका हूं इसे कोई नहीं समझ सकता है कि 'अन्य मूल्यवान चीजें' क्या हैं? अच्छा यह होगा कि उनका स्पष्ट शब्दों के उल्लेख किया जाये। अन्यथा समुद्र के नीचे जो कोई भी चीजें होंगी, उनके बारे में समझा जायेगा कि ये संघ में निहित है। सीधे सीधे यह कहना चाहिये 'समुद्र की तह में मिलने वाली सब चीजें' यही करने में बुद्धिमानी है और यही ईमानदारी की बात भी है।

***पं. ठाकुरदास भार्गव** (पूर्वी पंजाब : जनरल): 'सब अन्य चीजें' शब्द प्रयुक्त हैं।

***श्री एच.वी. कामत:** एक व्यक्ति जिसे मूल्यवान समझता है उसे दूसरा व्यक्ति मूल्यवान नहीं समझता। मेरी दृष्टि में मूल्यवान रत्नों का कोई मूल्य नहीं है। मैं यह चाहता हूं कि इसे स्पष्ट शब्दों में लिखा जाये।

अन्त में मैं डा. अम्बेडकर तथा उनके बुद्धिमान साथियों से पूछता हूं कि क्या 'समुद्र के नीचे' पदावली का अर्थ समुद्र की सतह के नीचे जो कुछ मिले उससे है अथवा समुद्र की तह में जो कुछ मिले उससे है अथवा समुद्र की तह के नीचे जो कुछ मिले उससे है। सम्भवत: वकील इस पदावली का अर्थ स्पष्टतया समझते हों। किन्तु चूंकि मैं वकील नहीं हूं इसलिये मैं यह स्वीकार करता हूं कि मैं इससे अनभिज्ञ हूं कि 'समुद्र के नीचे' का अर्थ क्या है? मुझे आशा है कि इसके पूर्व कि इस अनुच्छेद पर मत लिया जाये, डा. अम्बेडकर स्थिति को स्पष्ट करेंगे।

***श्री ए. थानू पिल्ले** (त्रावणकोर राज्य): अध्यक्ष महोदय, इस अनुच्छेद के सम्बन्ध में मैं कुछ शब्द कहना चाहता हूं। उसमें कहा गया है: ''भारत के जल-प्रांगण में, समुद्र के नीचे सब भूमियां, खनिज तथा अन्य मूल्यवान चीजें संघ में निहित होंगी।'' यह मेरी समझ में आता है कि जल-प्रांगण के सम्बन्ध में किसी सीमा तक नियंत्रण का अधिकार संघ को प्राप्त होना चाहिये किन्तु यह मेरी समझ में नहीं आता कि जल-प्रांगण में स्थित सम्पत्ति और मूल्यवान चीजें संघ में क्यों निहित हों। मेरी समझ में नहीं आता कि जल-प्रांगण के निकटवर्ती राज्यों को खनिजों आदि पर उनके अधिकार से क्यों वंचित किया जा रहा है। इन जल-प्रांगणों पर इस समय इन राज्यों का अधिकार है और उनसे उन्हें कुछ राजस्व भी प्राप्त होता है। उदाहरणार्थ त्रावणकोर राज्य में समुद्र से शंख निकाले जाते हैं। ये खनिज

[श्री ए. थानू पिल्ले]

है और इनके सम्बन्ध में उस राज्य को अधिकार प्राप्त है। मेरी समझ में नहीं आता कि वह अधिकार क्यों छीना जा रहा है। इस विषय पर अधिक विचार करने की आवश्यकता है और मुझे आशा है कि डा. अम्बेडकर सभा को बतायेंगे कि इस अनुच्छेद को इन शब्दों में रखने की क्या आवश्यकता है।

इसके अतिरिक्त 'अन्य मूल्यवान चीजें' शब्द भी है।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** क्या मैं यह पूछ सकता हूं कि मुझे किन बातों की व्याख्या करनी है?

***श्री ए. थानू पिल्ले:** मछलियां मूल्यवान चीजें हैं। इस अनुच्छेद में 'सब भूमियां, खजिन तथा अन्य मूल्यवान चीजें' शब्द प्रयुक्त हैं। समुद्र तटवर्ती राज्य होने के कारण त्रावणकोर में बहुत मछली पकड़ी जाती है? यदि मछलियों को भारत के जल-प्रांगण में समुद्र के नीचे की मूल्यवान चीजें समझा गया तो इस अनुच्छेद के अधीन वह राज्य मछली पकड़ने के अधिकार से वंचित हो जायेगा। सब बातों को देखते हुए इस अनुच्छेद पर अधिक विचार करने की आवश्यकता है। मुझे आशा है कि जल-प्रांगण के सम्बन्ध में राज्यों के वर्तमान अधिकारों में केवल उतनी ही कमी की जायेगी जितनी कि संघ की रक्षा के लिये आवश्यक हो।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** अध्यक्ष महोदय, जब हम अनुच्छेद 31 पर विचार-विमर्श कर रहे थे तो हमने देखा कि उसके खण्ड (2) में ये शब्द प्रयुक्त थे:

> ''समुदाय की भौतिक सम्पत्ति का स्वामित्व और नियंत्रण इस प्रकार बंटा हो कि जिससे सामूहिक हित का सर्वोत्तम रूप साधन हो।''

उस समय मेरे मित्र प्रोफेसर के.टी. शाह ने यह संशोधन उपस्थित किया था कि देश के प्राकृतिक साधनों, अर्थात खानों, खनिजों, जंगलों, नदियों और प्रवाहित जल और तटवर्ती समुद्र का नियंत्रण तथा स्वामित्व देश में सामूहिक रूप से निहित होगा तथा उसे प्राप्त होगा, इत्यादि। उस समय इसे स्वीकार नहीं किया गया था। इसलिये मुझे इसकी प्रसन्नता है कि डा. अम्बेडकर ने संविधान में इस उपबन्ध को रखने का निश्चय किया है कि भारत के जल-प्रांगण में समुद्र के नीचे की सब भूमियां, खनिज तथा अन्य मूल्यवान चीजें संघ में निहित होंगी तथा संघ के प्रयोजन के लिये धारण की जायेंगी। किन्तु मैं डा. अम्बेडकर से यह पूछना चाहता हूं कि क्या आकाश का उल्लेख करना आवश्यक नहीं है। अन्तर्राष्ट्रीय संचार में आकाश का भी बहुत महत्त्व है अर्थात इसका निर्णय करने की आवश्यकता है कि हमारे आकाश में कौन उड़ सकेगा और कौन नहीं; इत्यादि। इसलिये मैं डा. अम्बेडकर से पूछता हूं कि क्या संविधान में आकाश का उल्लेख करने की आवश्यकता है या नहीं।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर:** अध्यक्ष महोदय, मेरे विचार से अनुच्छेद 271-क एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण अनुच्छेद है और इस अनुच्छेद को संविधान में प्रविष्ट करने के लिये हममें डा. अम्बेडकर को बधाई देनी चाहिये। दो बातों की ओर ध्यान देने की आवश्यकता है। एक आलोचना यह की गई है कि जल-प्रांगण के विस्तार की कोई परिभाषा नहीं

की गई है। मेरे विचार से वास्तव में यह अनुच्छेद का गुण है, दोष नहीं क्योंकि अन्तर्राष्ट्रीय विधि जल-प्रांगण के विस्तार के सम्बन्ध में मौन है। उसका विस्तार किसी एक राज्य की घोषणा से निश्चित न होगा, बल्कि एक ऐसे सिद्धान्त के अधीन निश्चित होगा, जिसे सभी राष्ट्र स्वीकार करेंगे। आज भी यह देखा जाता है कि जल-प्रांगण के विस्तार के सम्बन्ध में इंग्लिस्तान और अमरीका का एक दृष्टिकोण है तो अन्य राष्ट्रों का दूसरा दृष्टिकोण है। इसलिये यह उचित ही है कि अनुच्छेद 271-क में जल-प्रांगण के विस्तार का उल्लेख नहीं किया गया है।

दूसरी बात यह है कि क्या यह उचित है कि सामान्य शब्दों द्वारा जल-प्रांगण का अधिकार संघ को प्रदान किया जाये। अमरीका में भी जब कैलिफोर्निया राज्य का मामला उच्चतम न्यायालय के सम्मुख आया तो उसने यह निर्णय किया कि यद्यपि राज्य का आरम्भ से जल-प्रांगण पर अधिकार है, परन्तु उचित यही है कि यह अधिकार संघ सरकार को प्राप्त हो, इसलिये इस अनुच्छेद में, जहां तक इसका सम्बन्ध है कि जल-प्रांगण पर संघ का अधिकार हो, यह उपबन्ध अमरीका के संविधान जैसे अन्य संघीय संविधानों में सन्निहित प्रगतिशील विचारधारा के अनुरूप है। जहां तक राज्यों के तथा राज्यों के न्यायालयों के क्षेत्राधिकार के प्रश्न का सम्बन्ध है, उस पर पृथक रूप से विचार करना होगा।

अब इस अनुच्छेद की इस पदावली पर विचार करने की आवश्यकता है कि ये 'संघ के प्रयोजन के लिये धारण की जायेगी।' यह भय प्रकट किया गया है कि इससे जो कुछ भी लाभ होगा वह संघ को होगा और तटवर्ती राज्यों को हानि ही उठानी होगी। मेरे विचार से अनुच्छेद के पहले भाग की अपेक्षा जिसमें कहा गया है कि ''संघ में निहित होगी'', ''संघ के प्रयोजनों के लिये धारण की जायेगी'' पदावली का अर्थ अधिक व्यापक है। हाल में आस्ट्रेलिया में यह प्रश्न उठाया गया था और यह निर्णय किया गया था कि ''राष्ट्रमंडल के प्रयोजनों के लिये'' पदावली ''राष्ट्रमंडल'' से भी अधिक व्यापक अर्थ रखती है। इसलिये मेरे विचार से ''संघ के प्रयोजनों के लिये'' पदावली से तटवर्ती राज्यों के हितों पर आघात नहीं होता और इसलिये उन्हें यह भय न करना चाहिये कि उनके वर्तमान अधिकारों पर आघात होगा।

अन्त में मैं यह कहना चाहता हूं कि ''समुद्र के नीचे की सब भूमियां, खनिज तथा अन्य मूल्यवान चीजें'' शब्द बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। अन्तर्राष्ट्रीय विधि का एक विवादाग्रस्त विषय यह भी है कि सतह सम्बन्धी अधिकारों, खनिज सम्बन्धी अधिकारों और मिट्टी सम्बन्धी अधिकारों में कोई अन्तर है या नहीं। वास्तव में मुझे अनुच्छेद में ''समुद्र की नीचे की सब भूमियां, खनिज तथा अन्य मूल्यवान चीजें संघ में निहित होंगी'' शब्दों को देख कर प्रसन्नता हुई है।

इन सब कारणों से अनुच्छेद 271-क को संविधान में प्रविष्ट करने के सम्बन्ध में जो संशोधन उपस्थित किया गया है उसका मैं समर्थन करता हूं।

***श्री वी.एस. सर्वटे:** अध्यक्ष महोदय, जैसा कि मुझसे पहले बोलने वाले वक्ता महोदय कह चुके हैं, इस नवीन अनुच्छेद से एक आधारभूत प्रश्न उठता है। इससे संघ में समाविष्ट तटवर्ती राज्यों के संघ सरकार से सम्बन्धों का प्रश्न उठता है। इसके पूर्व कि हम इस

[श्री वी.एस. सर्वटे]

अनुच्छेद को स्वीकार करें, इन राज्यों ने तथा भारत सरकार ने जिन प्रसंविदाओं पर हस्ताक्षर किये हैं, उनकी परीक्षा करने की आवश्यकता होगी। मैं कह नहीं सकता कि इन प्रसंविदाओं की परीक्षा करने के उपरांत ही इस अनुच्छेद को संविधान में प्रविष्ट करने का निश्चय किया गया है या नहीं। यदि प्रसंविदा के अधीन ये अधिकार भारत सरकार को नहीं सौंपे गये हैं तो एक विचित्र स्थिति उत्पन्न हो जायेगी। यदि थोड़ी देर के लिये हम यह मान लें कि प्रसंविदा द्वारा इस प्रकार का अधिकार प्रदान नहीं किया गया है तो प्रश्न यह उठता है कि क्या संविधान के इस अनुच्छेद के अधीन वह अधिकार प्राप्त हो जायेगा? यदि वह अधिकार प्राप्त नहीं है तो मेरे विचार से केवल इस अनुच्छेद को प्रविष्ट कर देने से वह प्राप्त नहीं हो जायेगा। जहां तक मैं समझता हूं इस अनुच्छेद को प्रविष्ट करने का केवल यह प्रभाव होगा कि यदि अधिकार प्राप्त है तो उसका संविधान में स्पष्टतया उल्लेख हो जायेगा। यदि अधिकार प्राप्त नहीं है तो इस अनुच्छेद के कारण वह भारत सरकार को प्राप्त न हो जायेगा। इसलिये मेरा यह निवेदन है कि जब तक प्रसंविदाओं की सावधानी से परीक्षा नहीं की जाती और यह पता नहीं लगा लिया जाता कि भारत सरकार को यह अधिकार प्रदान किया गया है या नहीं, इस अनुच्छेद को स्वीकार न करना चाहिये।

***श्री ए. करुणाकार मैनन** (मद्रास : जनरल): अध्यक्ष महोदय, इस अनुच्छेद 271-क पर मैं केवल यह बताने के लिये बोलना चाहता हूं कि हाशिये के शीर्षक में तथा अनुच्छेद की शब्दावली में अन्तर है। हाशिये का शीर्षक इस प्रकार है, ''जल-प्रांगण में स्थित भूमियां, खनिज तथा अन्य मूल्यवान चीजें संघ में निहित होंगी।'' इसका अर्थ यह है कि जल-प्रांगण में स्थित सब चीजें संघ में निहित होंगी। इसलिये प्रत्येक मूल्यवान चीजें यदि वह जल-प्रांगण में लटकी भी रहे, हाशिये के शीर्षक के अनुसार संघ की सम्पत्ति होगी। किन्तु हम अनुच्छेद में क्या देखते हैं? उसकी शब्दावली भिन्न है। उसमें कहा गया है: ''भारत के जल-प्रांगण में, समुद्र के नीचे की सब भूमियां, खनिज तथा अन्य मूल्यवान चीजें संघ में निहित होंगी,'' मेरे विचार से, ''जल-प्रांगण में, समुद्र के नीचे'' शब्दों का अर्थ ''जल-प्रांगण में स्थिति मूल्यवान चीजों'' शब्दों से भिन्न है। समुद्र के नीचे की मूल्यवान चीजों से उन चीजों का बोध होता है जो समुद्र की तह के नीचे हों। इस प्रकार उसका अर्थ सीमित है। मूल्यवान चीजों का अर्थ 'समुद्र के नीचे की' कहने से सीमित हो जाता है, किन्तु 'जल-प्रांगण में स्थित मूल्यवान चीजें' कहने से उनका अर्थ विस्तृत हो जाता है। मैं यह चाहता हूं कि हाशिये के शीर्षक में जो शब्द प्रयुक्त हैं वे अनुच्छेद के शब्दों से सुसंगत हों अन्यथा इनसे भविष्य में पेचीदगियां उत्पन्न हो सकती हैं।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर** (मद्रास : जनरल): श्रीमान्, मैं एक छोटा सा सुझाव सभा के सामने रखना चाहता हूं। जल-प्रांगण के सम्बन्ध में ही क्या कहा जा सकता है? इस नवीन अनुच्छेद 271-क के अधीन जल-प्रांगण में, समुद्र के नीचे की सब भूमियां, खनिज तथा अन्य मूल्यवान चीजें संघ में निहित होंगी। सारा जल-प्रांगण संघ का होगा, कहा यह गया है ''सब भूमियां, खनिज तथा अन्य चीजें।'' चाहे हम इस प्रश्न को न उठायें कि किसी जल-प्रांगण में किसी एक देश का ही क्षेत्राधिकार है या नहीं अथवा उसका उस जल प्रांगण पर स्वामित्व का अधिकार है या नहीं और चाहे हम इस अन्तर्देशीय

प्रश्न को भी न उठायें कि कोई जल-प्रांगण किसी तटवर्ती प्रान्त का है अथवा संघ का किन्तु हमें जल-प्रांगण के सम्बन्ध में तो सब कुछ स्पष्ट शब्दों में कहना चाहिये। इसलिये मेरे विचार से यह कहना आवश्यक है कि जल प्रांगण संघ का है और संघ में निहित है और यह संघ के प्रयोजनों के लिये धारण किया जायेगा। मेरे विचार से समुद्र के नीचे की चीजों में मछली आदि सम्मिलित होंगी। यदि वे सम्मिलित नहीं हैं तो इसे भी यह कहकर स्पष्ट कर देना चाहिये कि ''समुद्र के अन्दर की सब उपज, दो चीजों के अतिरिक्त अर्थात् खनिजों और भूमि के अतिरिक्त संघ में निहित होंगी।'' किसी जल-प्रांगण के सम्बन्ध में प्रान्तों के तथा संघ के बीच विवाद न होने देने के लिये और इसे भी निश्चित रूप से कह देने के लिये कि चाहे अन्तर्राष्ट्रीय विधि कुछ भी हो किन्तु अपने देश के जल प्रांगण पर हमारा अधिकार है, इसे स्पष्ट करने की आवश्यकता है। इस विषय के सम्बन्ध में जो अन्तर्राष्ट्रीय विधि है उसके बारे में भी मतभेद है। इन सन्देहों के निराकरण के लिये हमें इस निश्चित आशय के एक अनुच्छेद को प्रविष्ट करना चाहिये कि जल प्रांगण तथा उसकी किसी प्रकार की भी उपज संघ में निहित होगी और संघ के प्रयोजनों के लिये धारण की जायेगी।

***श्री ए. थानू पिल्लेः** जल का क्या होगा?

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** जल-प्रांगण संघ का होना चाहिये। हमें जल प्राप्त होना चाहिये तथा उस पर हमारा अधिकार होना चाहिये और हमें जल पर तथा मछलियों आदि पर स्वामित्व का अधिकार प्राप्त होना चाहिये।

***श्री ए. थानू पिल्लेः** मेरे माननीय मित्र का राज्यों द्वारा नमक के उत्पादन के सम्बन्ध में क्या मत है?

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** जल पर संघ का स्वामित्व होना चाहिये। जल-प्रांगण पर अपने अधिकार को हमें घोषित करना चाहिये।

***श्री महावीर त्यागीः** इस अनुच्छेद में 'जल' का भी उल्लेख क्यों नही कर दिया जाता है?

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** मैं तो यह चाहता हूं कि ये शब्द रखे जायें ''जल-प्रांगण में समुद्र के नीचे की सब भूमियां, खनिज तथा अन्य मूल्यवान चीजें तथा भारत का जल-प्रांगण संघ में निहित होगा तथा संघ के प्रयोजनों के लिये धारण किया जायेगा।''

***एक माननीय सदस्यः** वायु का क्या होगा?

***एक अन्य माननीय सदस्यः** आकाश का क्या होगा?

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** श्रीमान्, संशोधन को उपस्थित करते समय मैंने यह बताया था कि हमने इस प्रकार के अनुच्छेद को प्रविष्ट करना क्यों आवश्यक समझा। इस सम्बन्ध में मेरे माननीय मित्र श्री पिल्ले ने यह सन्देह प्रकट किया है कि इसमें मीन-क्षेत्र सम्बन्धी अधिकार भी सम्मिलित हो सकता है। मैं उनका ध्यान इस ओर आकृष्ट करना चाहता हूं कि मीन-क्षेत्र सूची 2 की प्रविष्टि संख्या 29 में अंकित है।

***श्री ए. थानू पिल्लेः** मैंने अन्य विषयों के संबंध में भी आपत्ति की थी।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं उनके सम्बन्ध में भी बोलूंगा। इस समय मैं इसी विषय पर अपने विचार प्रकट कर रहा हूं। मीन-क्षेत्रों के सम्बन्ध में सूची 2 में स्पष्ट शब्दों में प्रविष्टि का अर्थ यह है कि केन्द्रीय सरकार का जल-प्रांगण के सम्बन्ध में जो भी क्षेत्राधिकार होगा वह सूची 2 की प्रविष्टि संख्या 29 के अधीन होगा। इसलिये भारत के जल-प्रांगण में भी जो मीन-क्षेत्र हों, वे भी प्रान्तीय विषयों के अन्तर्गत आते हैं। मेरे माननीय मित्र श्री पिल्ले अब इसे स्पष्टतया समझ गये होंगे।

पहले प्रश्न के सम्बन्ध में स्थिति इस प्रकार है। जैसा कि मेरे माननीय मित्र श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने बताया है, अमरीका में यह प्रश्न उठाया गया था कि जल-प्रांगण पर संयुक्त राज्य अमरीका की सरकार का अधिकार है अथवा विभिन्न राज्यों का, क्योंकि यह आपको विदित ही है कि अमरीका के संविधान के अधीन केन्द्रीय सरकार को केवल वही शक्तियां प्राप्त हैं जो उसे स्पष्ट शब्दों में प्रदान की गई हैं। इसलिये अमरीका में, मेरे विचार से, अभी यह विवादग्रस्त प्रश्न ही है कि जल-प्रांगण राज्यों का है अथवा केन्द्र का। हमने यह विचार किया कि यह इतना महत्त्वपूर्ण विषय है कि हमें इसे छोड़ न देना चाहिये क्योंकि आगे चलकर इसके सम्बन्ध में अनुमान लगाया जा सकता है अथवा विवाद उठ खड़े हो सकते हैं अथवा दावे उपस्थित किये जा सकते हैं। साधारणतया यही समझा जाता है कि किसी राज्य का क्षेत्र उसकी भूमि तक ही सीमित नहीं होता किन्तु उसके आगे समुद्र में तीन मील तक विस्तृत होता है। यह सामान्यतः अन्तर्राष्ट्रीय विधि में सन्निहित है। भय यह है और मैं इसे छिपाना नहीं चाहता कि यदि कुछ तटवर्त्ती राज्य, जैसे कोचीन, त्रावणकोर अथवा कुछ भारतीय संघ में समाविष्ट होंगे तो यदि संविधान में इस प्रकार का कोई उपबन्ध न होगा तो वे यह कह सकते हैं कि उनके समाविष्ट होने से केन्द्रीय सरकार को उनके भौतिक क्षेत्र के सम्बन्ध में क्षेत्राधिकार प्राप्त होता है किन्तु उनका वह क्षेत्र जिसमें उनका जल-प्रांगण भी सम्मिलित है केन्द्रीय सरकार के क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत नहीं आता और उनके क्षेत्र तथा जल-प्रांगण पर, जो अन्तर्राष्ट्रीय विधि के अधीन और समाविष्ट के पूर्व उनको ही प्राप्त था, उनका ही क्षेत्राधिकार रहेगा। इसलिये संविधान में हम इसका स्पष्ट शब्दों में उल्लेख कर देना चाहते हैं कि यदि कोई तटवर्ती राज्य भारतीय संघ में समाविष्ट होगा तो उस तटवर्ती राज्य का जल-प्रांगण केन्द्रीय सरकार के अधिकार में आ जायेगा। इस प्रकार के प्रश्न के सम्बन्ध में कोई विवाद नहीं उठाया जा सकेगा और न उसे न्यायालय में ही उपस्थित किया जा सकेगा। इसी कारण हम अनुच्छेद 271-क में इस प्रकार का उपबन्ध रख रहे हैं।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** जल-प्रांगण के स्वामित्व का क्या होगा?

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** आप जल-प्रांगण पर स्वामित्व का अधिकार क्यों चाहते हैं? इसके पश्चात् आपकी यह इच्छा हो सकती है कि आवश्यक आकाश पर भी आपका अधिकार हो।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** हम नमक के उत्पादन आदि के लिये उस पर दायित्व चाहते हैं।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** उस क्षेत्र में आपकी विधियां प्रवर्तन में रहेंगी, आप चाहे जो विधियां भी निर्मित करें, उनका विस्तार भूमि से तीन मील तक के क्षेत्र पर रहेगा। इसी की आवश्यकता है और यह आपको इस अनुच्छेद से प्राप्त हो जाता है।

***श्री महावीर त्यागीः** जल-प्रांगण को सम्मिलित नहीं किया गया है।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** अन्तर्राष्ट्रीय विधि के अधीन अर्थात् किसी राज्य के राज्य क्षेत्र में केवल भूमि ही नहीं बल्कि तीन मील आगे तक का क्षेत्र सम्मिलित होता है। आप जो भी विधि निर्मित करेंगे उसका प्रवर्तन उस क्षेत्र में भी होगा।

***श्री महावीर त्यागीः** अवशिष्ट जल-प्रांगण का क्या होगा?

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** आकाश के नीचे जो कुछ भी होगा वह आपका होगा।

***श्री महावीर त्यागीः** तीन मील से आगे के जल-प्रांगण का क्या होगा?

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** क्या मैं डा. अम्बेडकर से पूछ सकता हूं कि क्या उन्हें यह विदित है कि जल-प्रांगण भी अन्य प्रकार की सम्पत्ति के समान ही है और अन्य सम्पत्ति से श्रेष्ठ सम्पत्ति भी कही जा सकती है और जल-प्रांगण के सम्बन्ध में बहुत विवाद होते हैं? किसी प्रान्त और संघ के बीच विवाद न होने देने के लिये क्या यह आवश्यक नहीं है कि जल-प्रांगण को भी भारतीय संघ की सम्पत्ति में सम्मिलित किया जाये?

***अध्यक्षः** इसका उत्तर दिया जा चुका है। उनका यह विचार है कि इसके उल्लेख की आवश्यकता नहीं है।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** भूमि के ऊपर जो कुछ हो वह भूमि में ही सम्मिलित किया जाता है। यदि भूमि के ऊपर कोई पेड़ हों तो वह भूमि में ही सम्मिलित किया जायेगा। जल भूमि के ऊपर होता है, इसलिये भूमि का ही भाग होगा।

***एक माननीय सदस्यः** श्रीमान्.....

***अध्यक्षः** मेरे विचार से हम काफी वादानुवाद कर चुके हैं और डा. अम्बेडकर उत्तर भी दे चुके हैं। अब अधिक वादानुवाद करने की आवश्यकता नहीं है। अब मैं इस अनुच्छेद पर मत लूंगा।

***श्री के. हनुमन्थय्या** (मैसूर राज्य): श्रीमान्, मैं एक बात का स्पष्टीकरण चाहता हूं। यदि डा. अम्बेडकर के कथनानुसार जल-प्रांगण, अर्थात् तट से तीन मील तक की भूमि संघ की होगी, तो इस अनुच्छेद की आवश्यकता ही क्या है?

***अध्यक्षः** वे इस प्रश्न का उत्तर दे चुके हैं।

***श्री के. हनुमन्थय्याः** यदि डा. अम्बेडकर का निर्वचन ठीक है.....

***अध्यक्षः** अब इस पर वादानुवाद की आवश्यकता नहीं है। डा. अम्बेडकर को जो कुछ कहना था, वे कह चुके हैं। सदस्यों को उसे स्वीकार करना हैं। अब मैं इस अनुच्छेद पर मत लूंगा।

[अध्यक्ष]

प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 271 के पश्चात् निम्नलिखित नवीन अनुच्छेद रखा जाये–

'271-A. *All lands, minerals and other things of value lying within territorial waters vest in the Union*—All lands, minerals and other things of value underlying the ocean within the territorial waters of India shall vest in the Union and be held for the purposes of the Union.' "

(271-क. *जल-प्रांगण में स्थित भूमियां, खनिज तथा अन्य मूल्यवान चीजें संघ में निहित होंगी*—भारत के जल-प्रांगण में, समुद्र के नीचे की सब भूमियां, खनिज तथा अन्य मूल्यवान चीजें संघ में निहित होंगी तथा संघ के प्रयोजन के लिये धारण की जायेंगी।)

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 271-क संविधान का अंग बना लिया गया।

अनुच्छेद 272

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 272 संविधान का अंग बना लिया जाये।''

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

''अनुच्छेद 272 में 'Part I' (भाग 1) शब्द और अंक जिन दो स्थानों पर आये हैं, वहां 'or Part III' (अथवा भाग 3) शब्द और अंक प्रविष्ट किये जायें।''

***श्री एच.वी. कामत:** सभा के विचाराधीन इस अनुच्छेद के सम्बन्ध में मैं केवल एक बात कहना चाहता हूं। इस अनुच्छेद का उद्देश्य यह है कि संघ की तथा प्रथम अनुसूची के भाग 1 अथवा भाग 3 में इस समय उल्लिखित प्रत्येक राज्य की कार्यपालिका शक्ति किसी ऐसी सम्पत्ति के अनुदान, विक्रय, व्ययन अथवा बंधक तक ही विस्तृत न होगी, जो यथास्थिति संघ के अथवा ऐसे राज्य के प्रयोजनों के लिये धारण की हुई हो, बल्कि संविदाकरण तक भी विस्तृत होगी। मैं कह नहीं सकता कि क्या यह उचित होगा कि सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पत्ति बिना केन्द्रीय संसद को बाद में अनुसमर्थन करने का अधिकार दिये हुए कार्यपालिका को संविदाकरण की शक्ति प्रदान की जाये। अनुच्छेद 2 और अनुच्छेद 3 को देखने से सभा को विदित हो जायेगा कि संसद को बहुत ही विस्तृत आधारभूत शक्तियां प्रदान की गई हैं। यदि इस अनुच्छेद को उसके वर्तमान रूप में ही स्वीकार कर लिया गया और किसी प्रकार का स्पष्टीकरण अथवा प्राधिकृत रूप से व्याख्या न की गई तो इससे (मैं यह इसलिये कह रहा हूं कि डा. अम्बेडकर और उनके बुद्धिमान सहकारियों ने इस सम्बन्ध में कुछ भी नहीं कहा है) कार्यपालिका को संविदाकरण की शक्ति तथा विशेषाधिकार प्राप्त हो जायेंगे।

***अध्यक्ष:** ''समुचित विधान मंडल की किसी विधि के अधीन रहते हुए।''

***श्री एच.वी. कामत:** जी हां, श्रीमान्। पहले भाग में यह अवश्य कहा गया है कि ''समुचित विधान-मंडल की किसी विधि के अधीन रहते हुए।'' किन्तु दूसरे भाग में कहा

गया है; ''क्रमशः उन प्रयोजनों के लिये सम्पत्ति के क्रय या अर्जन तक, तथा संविदाकरण तक, विस्तृत होगी।'' हमें अनुच्छेद में इसका स्पष्ट शब्दों में उल्लेख कर देना चाहिये कि संविदाकरण का अधिकार इसके अधीन होगा कि संसद को अथवा विधान मंडल को संविदा के शून्यन का अधिकार होगा। अन्यथा किसी राज्य में अथवा केन्द्र में कोई मंत्रिमंडल किसी अनुचित संविदा को कर सकता है। इसलिये संसद को अथवा विधान मंडल को उसके शून्यन का अधिकार प्राप्त होना चाहिये। अनुच्छेद में केवल 'किसी अधिनियम के अधीन' शब्द प्रयुक्त है। मैं कह नहीं सकता कि अधिनियम का अर्थ किसी ऐसे अधिनियम से है जो प्रयुक्त है, अथवा उसका अर्थ बाद में विधानमंडल के उसके शून्यन करने के अधिकार से है। मैं यह चाहता हूं कि संसद और विधान-मंडल को यह अधिकार स्पष्ट शब्दों में प्रदान किया जाना चाहिये कि सम्पत्ति के सम्बन्ध में केन्द्र में अथवा राज्यों में कार्यपालिका ने जो भी संविदा की हो, उसके शून्यन की शक्ति उनको प्राप्त है। यदि इस अनुच्छेद में इस रक्षा-कवच को स्थान नहीं दिया गया तो हम आगे चल कर कठिनाई में पड़ सकते हैं। इसलिये मेरे विचार से इस सम्बन्ध में इस प्रकार के स्पष्टीकरण की आवश्यकता है कि संसद को तथा राज्यों के विधान मंडलों को केवल विभिन्न प्रकार से सम्पत्ति के व्ययन तथा उसके सम्बन्ध में संविदाकरण का ही अधिकार प्राप्त नहीं है, किन्तु राज्य अथवा संघ की इस सम्बन्ध में की हुई संविदा के शून्यन का भी अधिकार है।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** श्रीमान्, मेरे विचार से श्री कामत ने जो मत तथा भय प्रकट किया है वह निराधार है, क्योंकि अनुच्छेद में स्पष्ट शब्दों में कहा गया है:

> ''संघ की, और इस समय प्रथम अनुसूची के भाग 1 में उल्लिखित प्रत्येक राज्य की कार्यपालिका शक्ति, समुचित विधान मंडल की किसी विधि के अधीन रहते हुए यथास्थिति संघ के अथवा ऐसे राज्य के प्रयोजनों के लिये धारण की हुई किसी सम्पत्ति के अनुदान, विक्रय, व्ययन या बंधक तक विस्तृत होगी, तथा क्रमशः उन प्रयोजनों के लिये सम्पत्ति के क्रय या अर्जन तक, तथा संविदाकरण तक, विस्तृत होगी।
>
> (2) संघ के, अथवा इस समय प्रथम अनुसूची के भाग 1 में उल्लिखित राज्य के प्रयोजनों के लिये अर्जित सब सम्पत्ति, यथास्थिति, संघ में या ऐसे किसी राज्य में निहित होगी।''

इसका अर्थ यह है कि इस अनुच्छेद का सब संविदाओं के सम्बन्ध में प्रयोग होगा। इसका कोई भय नहीं है कि विधान मंडलों के अधिनियमों की उपेक्षा करके संविदाएं की जायेंगी। किन्तु मुझे इस सम्बन्ध में सन्देह है कि इस अनुच्छेद की आवश्यकता है या नहीं और क्या बिना इस अनुच्छेद को संविधान में प्रविष्ट किये हुए संसद में यह शक्ति निहित नहीं हैं। संसद हमेशा संघ की सम्पत्ति के क्रय, व्ययन तथा बन्धक के सम्बन्ध में विधि बना सकती है। संविधान में इस प्रकार के अनुच्छेद को स्थान ही क्यों दिया जाये? संसद सर्वशक्तिसम्पन्न है और वह संघ की सम्पत्ति के क्रय तथा व्ययन के सम्बन्ध में विधि बना सकती है। मेरे विचार से इस अनुच्छेद को संविधान में स्थान देने की आवश्यकता नहीं है।

***श्री के.एम. मुन्शी** (बंबई : जनरल): अध्यक्ष महोदय, यदि मेरे माननीय मित्र कामत ने इस अनुच्छेद पर पूर्ण रूप से विचार किया होता तो उनको विदित हो जाता कि संसद

[श्री के.एम. मुंशी]

के अधिकार पूर्णतया सुरक्षित हैं। उसमें जिस आदान-प्रदान का अर्थात् जिस अनुदान, विक्रय व्ययन अथवा बन्धक का उल्लेख किया गया है वे विधान मंडल के कार्य नहीं हैं बल्कि कार्यपालिका के कार्य हैं और इसीलिये कार्यपालिका में समुचित रूप से निहित भी हैं। वे समुचित विधान मंडल के किसी भी अधिनियम के अधीन होंगे। इसलिये संसद अथवा राज्यों के विधान मंडल विधि बनायेंगे और उनमें इस प्रकार के आदान-प्रदान को करने की रीति की तथा जिस प्राधिकारी में इस आदान-प्रदान को करने की शक्ति निहित होगी, उसकी यथोचित रूप से परिभाषा की जायेगी। यदि इस अनुच्छेद में उल्लिखित कार्यपालिका शक्ति संसद अथवा विधान मंडलों को प्रदान की गई तो सरकार पूर्णतया पंगु हो जायेगी। उदाहरणार्थ सम्पत्ति के विक्रय के प्रश्न को ही लीजिये। किसी सुदूर सैनिक कटक में एक कील भी सरकार की सम्पत्ति है, यदि कोई अधिकारी उसे बेचना चाहे तो क्या इस मामले को संसद के सम्मुख रखा जाना चाहिये? राज्य के दो अंग हैं, अर्थात् कार्यपालिका और विधान मंडल के निर्माण का अर्थ यही है कि कार्यपालिका के कार्य कार्यपालिका ही करेगी किन्तु वह इन कार्यों को विधान-मंडल द्वारा निर्धारित योग्यताओं, प्राधिकार तथा रीति के अधीन करेगी। इस प्रकार इस आदान-प्रदान के सम्बन्ध में संसद को कोई कार्यपालिका शक्ति प्राप्त नहीं हो सकती है, इसलिये मेरे विचार से, इस अनुच्छेद को जो भारत सरकार के अधिनियम से लिया गया है, विचारपूर्वक रखा गया और इसे रहने देना चाहिये।

***अध्यक्ष:** डा. अम्बेडकर, क्या आप बोलना चाहते हैं?

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** मेरे विचार से श्री मुंशी ने सब बातें स्पष्ट कर दी हैं, और अब अधिक कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 272 में 'Part I' (भाग 1) शब्द और अंक जिन दो स्थानों पर आये हैं वहां 'or Part III' (अथवा भाग 3) शब्द और अंक प्रविष्ट किये जायें।''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 272, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 272, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया गया।

अनुच्छेद 273

***अध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेद 273 को उठाते हैं। डा. अम्बेडकर।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

''अनुच्छेद 273 के खण्ड (1) में 'Part I' (भाग 1) शब्द और अंक के बाद 'or Part III' (अथवा भाग 3) शब्द और अंक प्रविष्ट किये जायें।

उपरोक्त संशोधन संख्या 201 के सम्बन्ध में अनुच्छेद 273 के खण्ड (1) में जिन दो स्थानों पर 'Governor' (राज्यपाल) शब्द आया है, वहां 'or the Ruler' (अथवा राजप्रमुख) शब्द प्रविष्ट किये जायें।

उपरोक्त संशोधन संख्या 201 के सम्बन्ध में अनुच्छेद 273 के खण्ड (2) में 'Governor of a State' (राज्य के राज्यपाल) शब्दों के स्थान में 'the Governor or the Ruler' (राज्यपाल अथवा राजप्रमुख) शब्द प्रविष्ट किये जायें।''

***श्री महावीर त्यागी:** श्रीमान्, इस अनुच्छेद को उसके वर्तमान रूप में पढ़ने से यह पता नहीं चलता कि यदि कोई गलत आदान-प्रदान हुआ तो उसके लिये अन्ततोगत्वा कौन उत्तरदायी होगा। अनुच्छेद इस प्रकार है:

''संघ की अथवा इस समय प्रथम अनुसूची के भाग 1 में उल्लिखित राज्य की कार्यपालिका शक्ति के प्रयोग में की गई सब संविदाएं, यथास्थिति राष्ट्रपति द्वारा अथवा उस राज्य के राज्यपाल द्वारा की गई कही जायेंगी तथा वे सब संविदाएं और सम्पत्ति सम्बन्धी हस्तान्तरण-पत्र, जो उस शक्ति के पालन के लिये किये जायें, राष्ट्रपति या राज्यपाल की ओर से उसके द्वारा निदेशित या प्राधिकृत व्यक्तियों द्वारा और रीति के अनुसार लिखे जायेंगे।''

''की ओर से..... लिखे जायेंगे आदि'' शब्दों से मैं यह समझता हूं कि 'लिखे जायेंगे' शब्दों पर जोर नहीं दिया गया है किन्तु राष्ट्रपति के नाम पर जोर दिया गया है। मैं चाहता हूं कि इसे स्पष्ट कर दिया जाये ताकि भविष्य में इस अनुच्छेद का यह अर्थ न लगाया जा सके कि राज्यपाल अथवा उच्च पदस्थ अधिकारी एक बार जो भी करार कर दें वह कार्यान्वित करना ही होगा। यह मेरी समझ में आता है कि वह राज्यपाल के नाम से कार्यान्वित होगा, परन्तु प्रश्न यह है कि राज्यपाल के नाम से अथवा उन लोगों द्वारा, जो राज्यपाल के नाम से कार्य करें, जो भी करार किया जाये, चाहे वह हमारे हित में हो या न हो, क्या वह किसी भी दशा में भी कार्यान्वित किया जायेगा? उदाहरणार्थ ऐसे भी अवसर उपस्थित हो सकते हैं, जैसा कि हाल में उपस्थित हुआ था, जब कि भारत अधिराज्य अथवा मंत्रिमंडल के मंत्रियों ने एक वक्तव्य दिया था और कश्मीर के सम्बन्ध में कहा था कि वे जनमत संग्रह करेंगे और उस जनमत संग्रह के आधार पर.....

***अध्यक्ष:** यह विषय संविदा का है और इसका किसी ऐसे राजनैतिक कार्य से कोई सम्बन्ध नहीं है जिसकी चर्चा आप कर रहे हैं।

***श्री महावीर त्यागी:** जी हां, संविदाओं के सम्बन्ध में भी यदि पदारूढ़ व्यक्ति सरकार की आस्तिओं का संविदाकरण करें तो क्या उनके लिये कोई रुकावट न होगी? क्या संसद उन संविदाओं का अनुसमर्थन करेगी अथवा वे केवल इस कारण कार्यान्वित की जायेंगी कि किसी पदारूढ़ व्यक्ति ने वचन दिया है? क्या संसद को अनुसमर्थन का अधिकार प्राप्त होगा या नहीं? राजनैतिक विषयों के सम्बन्ध में जो वचन दिये जाते हैं उनका प्रभाव आर्थिक मामलों पर भी पड़ता है। मैं कश्मीर की चर्चा नहीं करना चाहता। कई अन्य प्रकार के आदान-प्रदान भी हैं। मैं पहले की अथवा इस समय की सरकार के कार्यों

[श्री महावीर त्यागी]

के उदाहरण नहीं देना चाहता, किन्तु केवल काल्पनिक उदाहरणों को सभा के सम्मुख रखना चाहता हूं। किसी अवसर पर ऐसी भी कोई बड़ी आर्थिक संविदा की जा सकती है जिससे देश के हितों पर आघात हो, किन्तु इस अनुच्छेद में कहा गया है:

> ''संविदाएं और सम्पत्ति सम्बन्धी हस्तान्तरण पत्र जो उस शक्ति के पालन में किये जायें, राष्ट्रपति की ओर से लिखे जायेंगे।''

यदि अर्थ केवल यह हो कि संविदाएं राष्ट्रपति के नाम से कार्यान्वित की जायेंगी, तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। किन्तु यदि अर्थ यह हो कि उन्हें किस भी दशा में कार्यान्वित किया जायेगा, तो मुझे अवश्य आपत्ति है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** दायित्व तो है ही।

***श्री महावीर त्यागी:** क्या आप बिना दायित्व की परिभाषा किये हुए ही दायित्व को स्वीकार करने जा रहे हैं? बात केवल इतनी नहीं है कि इसका उल्लेख हो कि दायित्व का निर्वहन राज्यपाल के नाम से अथवा अन्य व्यक्तियों के नाम से हो, क्योंकि वह राज्य का प्रमुख होगा और कार्यपालिका के सब कार्य उसके नाम से होंगे। किन्तु खण्ड (2) में कहा गया है कि न राष्ट्रपति न राज्य का राज्यपाल और न अब राजप्रमुख ही इस संविधान के प्रयोजनों हेतु की गई अथवा लिखी गई किसी संविदा या हस्तान्तरण पत्र के बारे में वैयक्तिक रूप से उत्तरदायी होगा। राज्यपाल के सम्बन्ध में तो यह बात समझ में आती है क्योंकि उसके नाम का उल्लेख रस्मी तौर से किया जाता है किन्तु उन पदाधिकारियों और मंत्रियों को क्षमा नहीं किया जा सकता, जो उसके नाम से गलत कार्य करते हैं। ऐसा पदाधिकारी अपने गलत कार्य के लिये वैयक्तिक तथा नैतिक रूप से उत्तरदायी होगा। इसके द्वारा यह विमुक्ति प्रदान की जा रही है कि जो कुछ भी किया जाये, उसके लिये न तो जिसके नाम से कार्य किया जायेगा, वह उत्तरदायी होगा और न जो कार्य करेगा वह उत्तरदायी होगा। जब तक कि संसद दायित्व का अनुसमर्थन न करे, किसी न किसी व्यक्ति को उत्तरदायी ठहराना ही चाहिये। इसलिये मैं यह चाहता हूं कि इसका स्पष्टीकरण किया जाये क्योंकि बहुत बड़ी बातों के सम्बन्ध में वचन दिये जा सकते हैं, भले ही राष्ट्र इस प्रकार के वचन न देना चाहे। वचनों को कार्यान्वित करना होगा, किन्तु कोई भी व्यक्ति उनके लिये उत्तरदायी न होगा। मेरे विचार से राज्य के कार्यों को जो कोई भी व्यक्ति करे, उनके लिये उसे उत्तरदायी होना चाहिये, वैयक्तिक रूप से भी उत्तरदायी होना चाहिये। विदेशी शासन से हमें इस विचारधारा की देन मिली है कि सरकारी कार्य करने में यदि कोई व्यक्ति गलती करे तो वह उसके लिये वैयक्तिक रूप से उत्तरदायी न होगा, जैसे कि सम्राट के समान कोई पदाधिकारी कोई गलत कार्य कर ही नहीं सकता। मैं इस विचारधारा से असहमत हूं और मेरी दृष्टि से वह निन्दनीय है। मेरी यह धारणा है कि यदि कोई व्यक्ति गलती करे अथवा राज्य के वित्त का गलत उपयोग करे अथवा कोई ऐसा कार्य करे, जिससे राष्ट्र के हित को हानि पहुंचे, तो उसे हमेशा यह ज्ञात रहना चाहिये कि उसका दायित्व उस पर है और उसी को उसका जवाब देना होगा तथा दायित्व को चुकाना होगा। आखिर दायित्व किसी का तो होना चाहिये, अन्यथा पदाधिकारी

सभी प्रकार के दायित्वों से विमुक्त होंगे और संविदाएं तथा करार स्वतंत्र रूप से किये जायेंगे और वचन भी स्वतंत्र रूप से दिये जायेंगे और उनके औचित्य का कोई ध्यान न रखा जायेगा। यदि राज्यपाल उत्तरदायी न हो तो जिन लोगों ने उसकी ओर से वचन दिया हो अथवा राष्ट्र को वचनबद्ध किया हो, उत्तरदायी ठहराये जाने चाहिये। मैं डा. अम्बेडकर के सम्मुख इस प्रश्न को रखता हूं और मुझे आशा है कि वे स्थिति को स्पष्ट करेंगे।

***श्री एच.वी. कामतः** अध्यक्ष महोदय, मेरे विचार से मेरे मित्र श्री त्यागी की आपत्ति तर्कसंगत नहीं है। यदि वे अनुच्छेद 64(1) को तथा तद्विषयक भाग के राज्यपाल सम्बन्धी अनुच्छेद को देखने का कष्ट करें तो उन्हें विदित होगा कि भारत सरकार की अथवा किसी राज्य की समस्त कार्यपालिका कार्यवाही राष्ट्रपति के नाम से अथवा राज्यपाल के नाम से की हुई कही जायेगी। इस अनुच्छेद में भी बहुत कुछ अनुच्छेद 64 की शब्दावली प्रयुक्त है। इस अनुच्छेद में कहा गया है कि संघ की कार्यपालिका शक्ति के प्रयोग में की गई सब संविदाएं राष्ट्रपति द्वारा की गई कही जायेंगी, इत्यादि।

''राष्ट्रपति द्वारा की गई कही जायेंगी'' शब्द प्रयुक्त है। वास्तव में न तो राष्ट्रपति न राज्यपाल और न नये संशोधन के अधीन राज्य का राजप्रमुख संविदा को करता हैं। जो भी संविदा संघ द्वारा अथवा राज्य द्वारा की जाती है वह राष्ट्रपति अथवा राज्यपाल अथवा राजप्रमुख के नाम से की हुई कही जाती है।

***श्री महावीर त्यागीः** उसे वास्तव में करता कौन है?

***श्री एच.वी. कामतः** संघ अथवा राज्य उसे करता है।

***श्री महावीर त्यागीः** लोग उसे करते हैं।

***श्री एच.वी. कामतः** यदि मेरे मित्र का यह विचार हो कि सम्पूर्ण प्रभुत्व का प्राधिकार लोगों में निहित है तो संघ में अथवा राज्य में जो कुछ होता है उसके लिये लोग उत्तरदायी हैं। यह इस पर निर्भर है कि संघ के अथवा राज्य के प्राधिकार को निहित करने को मेरे मित्र किसी प्रकार व्यक्त करना चाहते हैं। यदि वह लोगों में निहित है तो लोग उत्तरदायी हैं। हमारा संविधान लोकतंत्रात्मक संविधान है, इसीलिये सब कुछ लोगों के नाम से किया जाता है। संघ में अथवा राज्य में जो कुछ किया जाता है, अथवा लोगों के लिये अथवा लोगों द्वारा किया जाता है। किन्तु जो कुछ किया जाता है वह यथास्थिति राष्ट्रपति अथवा राज्यपाल अथवा राजप्रमुख के नाम से किया हुआ कहा जाता है। यह कुछ संविदाओं को प्रभावी बताने के लिये अथवा प्रभाव में लाने के लिये केवल सांविधानिक अथवा विधानिक सूत्र है। अन्यथा यदि प्रत्येक संविदा पर संघ के लोगों को अथवा राज्य के लोगों को हस्ताक्षर करने पड़ें, तो सांविधानिक विधि के अधीन उच्च न्यायालय अथवा उच्चतम न्यायालय उसका कुछ भी अर्थ न लगा सकेगा। किसी न किसी व्यक्ति को उस पर हस्ताक्षर करने होंगे। उदाहरणार्थ संधियों पर विदेश मंत्री के अथवा प्रधानमंत्री के हस्ताक्षर होते हैं।

***श्री महावीर त्यागीः** मुझे राज्यपाल के नाम के प्रयोग पर कोई आपत्ति नहीं है, किन्तु इस पर अवश्य आपत्ति है कि जो लोग इन उपक्रमों को करेंगे और देश को वचनबद्ध करेंगे, उन्हें विमुक्ति प्रदान की गई है।

***श्री एच.वी. कामतः** मैं इसके सम्बन्ध में अभी बोलूंगा। खंड (2) में कहा गया है कि न तो राष्ट्रपति और न राज्यपाल इत्यादि वैयक्तिक रूप से उत्तरदायी होंगे। इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह युक्तियुक्त तथा तर्कयुक्त है और साथ ही विधिसंगत भी है, जिसका ज्ञान सभा को पूर्ण रूप से है, कि राष्ट्रपति अथवा राज्यपाल अथवा राजप्रमुख जिस कार्य को स्वयं न करें और जो उसके नाम से किया हुआ कहा जाये, उसके सम्बन्ध में केन्द्र में अथवा राज्य में मंत्रिमंडल संविदाकरण करेंगे और संघ का अथवा राज्य का औपाधिक प्रमुख संविदा पर हस्ताक्षर करेगा। वह वैयक्तिक रूप से उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता। इस अनुच्छेद का अर्थ केवल इतना ही है।

किन्तु मैं यह चाहता हूं कि डा. अम्बेडकर अपने उत्तर में, यदि वे उत्तर दें तो एक अन्य बात को स्पष्ट करें। उसका सम्बन्ध इस अनुच्छेद की भाषा से है। मेरे विचार से कई अन्य अनुच्छेदों के समान इसे भी तदरूप भारत सरकार के अधिनियम से लिया गया है। इस अनुच्छेद के आरम्भ में ''संघ की अथवा राज्य की कार्यपालिका शक्ति के प्रयोग में की गई सब संविदाएं'' शब्द हैं। किन्तु आगे चलकर ''वे सब संविदाएं और सम्पत्ति सम्बन्धी हस्तान्तरण-पत्र'' शब्द हैं संविधान की अथवा विधि की शब्दावली में इसका क्या अर्थ है, मैं कह नहीं सकता क्योंकि मैं वकील नहीं हूं। ''संविदा'' शब्द के अर्थ को मैं अच्छी तरह समझता हूं। किन्तु सम्पत्ति सम्बन्धी आश्वासन का क्या अर्थ है, मैं कह नहीं सकता। कथित अथवा लिखित आश्वासन क्या होंगे और सम्पत्ति के सम्बन्ध में क्या आश्वासन दिये जायेंगे, मैं कह नहीं सकता। चूंकि अनुच्छेद के आरम्भ में 'संविदा' शब्द आया है, क्या बाद को भी केवल 'संविदा' शब्द रखना पर्याप्त न होगा? मेरे विचार से केवल इसी शब्द को प्रयोग में लाना उचित होगा। जो शब्द प्रयुक्त है उनसे प्रथम उत्पन्न होने की तथा अनुच्छेद के सुबोध न होने की सम्भावना है। इसके अतिरिक्त डा. अम्बेडकर के संशोधन में राजप्रमुख शब्द आया है। मैं कह नहीं सकता कि आगे चल कर राज्यपाल और राजप्रमुख में विभेद करके हमसे उसे स्वीकार करने को कहा जायेगा या नहीं। आज यह विभेद है, इसीलिये मैंने यह सुझाव रखा था कि इन अनुच्छेदों को इस समय स्थगित रखा जाये। हमें सरदार पटेल और प्रधानमंत्री महोदय ने यह आश्वासन दिया है कि वे राज्यों को प्रथम अनुसूची के भाग 1 में उल्लिखित राज्यों अथवा राज्यपालों के प्रान्तों के अनुरूप बनाने का प्रयास कर रहे हैं और मुझे आशा है कि उनको सफलता प्राप्त होगी। मेरे विचार से जब संविधान प्रयोग में आयेगा तो भाग 1 और भाग 3 के राज्यों का विभेद न रह जायेगा और केवल एक ही वर्ग के राज्य हो जायेंगे तथा राज्यपाल और राजप्रमुख में जो अन्तर है वह भी विलुप्त हो जायेगा। शब्दावली के सम्बन्ध में मेरे विचार से नरेश को नरेश नहीं कहा गया है बल्कि राजा अथवा राज्यप्रमुख आदि कहा गया है।

***अध्यक्षः** यह प्रश्न कल उठाया गया था और डा. अम्बेडकर ने कहा था कि वे किसी अन्य उपयुक्त शब्द के सम्बन्ध में विचार करेंगे।

***श्री एच.वी. कामतः** मुझे खेद है कि मैं कल यहां उपस्थित नहीं था। इसीलिये मेरे ध्यान में यह आया कि राज्य की कार्यपालिका के प्रभुत्व के लिये ''राज्य का राजप्रमुख''

पदावली उपयुक्त न होगी। मुझे आशा है कि इन सभी को राज्यपाल कहा जायेगा और राजप्रमुख शब्द अब प्रयोग न किया जायेगा। मुझे आशा है कि डा. अम्बेडकर इन बातों को स्पष्ट करेंगे।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** श्रीमान्, मेरे विचार से मेरे माननीय मित्र श्री महावीर त्यागी ने आपत्ति इस कारण की है कि उन्होंने अनुच्छेद 272 को सावधानी से नहीं पढ़ा है। उसके अधीन संविदाकरण की शक्ति प्रदान की गई है और वह विधान मंडलों के अधिनियमों के अधीन प्रदान की गई है। उन्होंने पाकिस्तान का उदाहरण दिया और यह बताया कि उसके साथ सम्पत्ति के सम्बन्ध में कौन सी संविदाएं आदि की गई हैं। मुझे विश्वास है कि जो कुछ भी किया गया है वह संसद की सहमति से किया गया है। इसलिये इस अनुच्छेद के अधीन जो भी संविदाएं की जायेंगी वे विधान मंडल की विधियों के अनुसार ही की जायेंगी और इन विधियों का खण्डन करके कोई व्यक्ति संविदा न कर सकेगा।

किन्तु मेरे विचार से अनुच्छेद 272 के दूसरे खण्ड की आवश्यकता नहीं है। यह सभी को विदित है कि राष्ट्रपति अथवा राज्यपाल सरकार की ओर से कार्य करता है और इसलिये वह व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी नहीं हो सकता। इसलिये इस उपबन्ध को रखने की क्या आवश्यकता है?

***श्री महावीर त्यागी:** मैं यह बताना चाहता हूं कि अनुच्छेद 272 में ''सम्पत्ति के अनुदान, विक्रय, व्ययन या बंधक'' का उल्लेख है। अनुच्छेद 273 का आशय भिन्न है और उसमें ''संविदाओं और हस्तान्तरण-पत्रों'' आदि का उल्लेख है।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** इस अनुच्छेद में यह कहा गया है कि विधान-मंडल की विधियों के अधीन रहते हुए ही संविदाकरण हो सकता है। किन्तु अनुच्छेद 273(2) में जो छूट दी गई है उसका अर्थ मैं नहीं समझ पाया। यदि राष्ट्रपति अथवा राज्यपाल विधियों का खण्डन करेगा तो उस पर महाभियोग लगाया जा सकता है और किसी अन्य अधिकारी को इस दोष के लिये दंडित किया जा सकता है। इस उपधारा में जो छूट विशेष प्रकार से दी गई है उसका कारण मैं जानना चाहता हूं।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मेरे माननीय मित्र श्री कामत ''हस्तान्तरण-पत्रों'' के सम्बन्ध में कुछ कह रहे थे और मेरे विचार से इनका तर्क यह था कि हम एक स्थान पर ''संविदा'' शब्द प्रयोग कर रहे हैं और दूसरे स्थान पर ''हस्तान्तरण-पत्र''। ''हस्तान्तरण-पत्र'' बहुत पुरानी पदावली है और वह सभी प्रकार के हस्तान्तरण के अर्थ में प्रयोग किया जाता रहा है। इसलिये ''हस्तान्तरण-पत्र'' शब्द में 'संविदा'' शब्द का आशय सम्मिलित है। इसलिये यदि ये दोनों शब्द भी प्रयोग किये जायें तो कोई कठिनाई न होगी, क्योंकि सम्पत्ति के हस्तान्तरण के सम्बन्ध में हस्तान्तरण-पत्र का अर्थ संविदा ही है।

***श्री एच.वी. कामत:** मैंने भाषा के सम्बन्ध में आपत्ति की थी। अनुच्छेद के आरम्भ में ''सब संविदाएं'' शब्द आये हैं और बाद को ''वे सब संविदाएं और सम्पत्ति सम्बन्धी हस्तान्तरण-पत्र'' आदि शब्द आये हैं।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** यदि भाषा के सम्बन्ध में कोई कठिनाई होगी, तो उस पर मसौदा समिति विचार करेगी। मैं यह बता रहा था कि विधि की दृष्टि से हस्तान्तरण-पत्र और संविदा में क्या अन्तर है।

इसके अतिरिक्त श्री त्यागी ने यह प्रश्न उठाया है कि यदि कोई व्यक्ति किसी संविदा पर हस्ताक्षर करता है तो वह उसके दायित्व से विमुक्त क्यों किया जाये। मेरे विचार से यदि श्री त्यागी को मंत्रिमंडल का सदस्य बना दिया जाता तो उनकी आपत्ति के बहुत अंश का निराकरण हो जाता। मैं उनसे यह पूछता हूं कि यदि वे भारत सरकार की ओर से कोई संविदा करते तो उसका दायित्व क्या उन पर होता? मुझे विश्वास है कि वे साधारण वाणिज्य सम्बन्धी प्रक्रिया से परिचित हैं। एक प्रधान अपनी ओर से कुछ कार्य करने के लिये एक अभिकर्त्ता नियुक्त करता है। जब तक कि अभिकर्त्ता ने प्रधान द्वारा उसे दिये हुए प्राधिकार का उल्लंघन न किया हो, तब तक प्रधान के हितसाधन के लिये उसने जो भी संविदा की हो, उसका दायित्व व्यक्तिगत रूप से उस पर न होगा। यहां भी इसी सिद्धांत का अनुसरण किया गया है। मेरे माननीय मित्र श्री त्यागी को यह विदित नहीं है कि भारत सरकार में बहुत काल से इसी प्रथा का अनुसरण होता आया है कि किसी निश्चित प्रतिष्ठा के अधिकारी के निकाले हुए किसी दस्तावेज अथवा पत्र द्वारा ही भारत सरकार वचनबद्ध होती है। किसी अन्य अधिकारी द्वारा जारी किया हुआ दस्तावेज अथवा पत्र भारत सरकार के लिये बन्धनकारी नहीं होता। इसलिये इसे नियमों में स्पष्ट शब्दों में कहने की आवश्यकता होती है कि उपसचिव को अथवा संयुक्त सचिव को अथवा अतिरिक्त सचिव को अथवा केवल सचिव को ही भारत सरकार को वचनबद्ध करने की शक्ति प्राप्त होगी। इसलिये यह मेरी समझ में नहीं आता कि जो व्यक्ति भारत सरकार की ओर से केवल हस्ताक्षर कर रहा हो, उस पर व्यक्तिगत रूप से दायित्व क्यों, हो, क्योंकि वह भारत सरकार के प्राधिकार से अथवा उसके अन्तर्गत कार्य करेगा, यदि भारत सरकार किसी आदान-प्रदान के लिये स्वीकृति देती है, किन्तु विधान मंडल उस पर आपत्ति करता है और यह समझता है कि वह अनावश्यक है अथवा हानिकारक है अथवा कार्यपालिका सरकार को संसद द्वारा प्रदत्त विधायी प्राधिकार के अन्तर्गत नहीं है, तो यह मामला सरकार और संसद के आपस में तय करने का है। संसद या तो सरकार को पदच्युत कर सकती है या संविदा का शून्यन कर सकती है या जो भी चाहे कर सकती है। किन्तु यह मेरी समझ में नहीं आता कि किसी ऐसे व्यक्ति को, जो अन्य पक्ष को केवल यह विश्वास दिलाने के लिये नियुक्त किया गया हो कि वह भारत सरकार की ओर से हस्ताक्षर कर रहा है, किस प्रकार उत्तरदायी ठहराया जा सकता है। मेरे मित्र श्री त्यागी की आपत्ति में कोई सार नहीं है।

***अध्यक्ष:** अब मैं इन विभिन्न संशोधनों पर मत लेता हूं।

प्रस्ताव यह है कि:

> ''अनुच्छेद 273 के खण्ड (1) में 'Part I' (भाग 1) शब्द और अंक के बाद 'or Part III' (अथवा भाग 3) शब्द और अंक प्रविष्ट किये जायें।''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''उपरोक्त संशोधन संख्या 201 के सम्बन्ध में अनुच्छेद 273 के खण्ड (1) में जिन दो स्थानों पर 'Governor' (राज्यपाल) शब्द आया है, वहां 'or the Ruler' (अथवा राजप्रमुख) शब्द प्रविष्ट किये जायें।''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''उपरोक्त संशोधन संख्या 201 के सम्बन्ध में अनुच्छेद 273 के खण्ड (2) में 'the Governor of a State' (राज्य के राज्यपाल) शब्दों के स्थान में 'the Governor or the Ruler' (राज्यपाल अथवा राजप्रमुख) शब्द प्रविष्ट किये जायें।''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 273 संशोधित रूप में संविधान का अंग बना लिया जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 273 संशोधित रूप में संविधान का अंग बना लिया गया।

अनुच्छेद 274

***अध्यक्ष:** अब अनुच्छेद 274 पर विचार-विमर्श हो सकता है।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

''अनुच्छेद 274 के खण्ड (1) में दूसरी जगह जहां पर 'Government of India' (भारत-सरकार) शब्द आये हैं, उनके स्थान पर 'Union of India' (भारतीय संघ) शब्द रखे जायें।''

श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं इस अनुच्छेद के सम्बन्ध में अपने अन्य संशोधनों को भी उपस्थित करना चाहता हूं।

मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

''अनुच्छेद 274 के खण्ड (2) के उपखण्ड (क) में 'Government of India' (भारत-सरकार) शब्दों के स्थान पर 'Union of India' (भारतीय संघ) शब्द रखे जायें।''

मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

''संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2980 के सम्बन्ध में अनुच्छेद 274 के खण्ड (1) में 'Part I' (भाग 1) शब्द और अंक के बाद 'or Part III' (अथवा भाग 3) शब्द और अंक प्रविष्ट किये जायें।''

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

''संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2980 और 2981 के सम्बन्ध में अनुच्छेद 274 के खण्ड (1) में 'by the Legislature' (विधान मंडल द्वारा) शब्दों के स्थान पर 'of the Legislature' (विधान-मंडल का) शब्द रखे जायें।''

मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

''उपरोक्त संशोधन संख्या 204 के सम्बन्ध में अनुच्छेद 274 के खण्ड (1) में 'corresponding Provinces' (तत्स्थानी प्रान्तों) शब्दों के बाद 'or the corresponding Indian States' (अथवा तत्स्थानी देशी राज्य) शब्द प्रविष्ट किये जायें।''

मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

''उपरोक्त संशोधन संख्या 206 के सम्बन्ध में अनुच्छेद 274 के खण्ड (2) के उपखण्ड (ख) में–

(1) 'a Province' (कोई प्रान्त) शब्दों के बाद 'or an Indian State' (अथवा कोई देशी राज्य) शब्द प्रविष्ट किये जायें; और

(2) 'the Province' (प्रांत) शब्दों के बाद 'or the Indian State' (अथवा देशी राज्य) शब्द प्रविष्ट किये जायें।''

***श्री जसपतराय कपूर** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): मैं अपने संशोधन संख्या 2981 और संशोधन संख्या 2984 को उपस्थित नहीं कर रहा हूं। किन्तु यदि उचित समझा जाये, तो उन्हें मसौदा समिति के सामने उसके विचारार्थ रखा जाये।

(संशोधन संख्या 2982 उपस्थित नहीं किया गया।)

***अध्यक्ष:** क्या कोई सदस्य महोदय इस अनुच्छेद के सम्बन्ध में बोलना चाहते हैं?

***श्री एच.वी. कामत:** अध्यक्ष महोदय, संशोधन संख्या 2980 का उद्देश्य यह है कि जहां तक व्यवहार वाद उपस्थित करने अथवा अपने विरुद्ध व्यवहार वाद के उपस्थित होने का सम्बन्ध है 'भारत सरकार' शब्दों के स्थान में 'भारतीय संघ' शब्द रखे जायें। मैं कह नहीं सकता कि इस शब्द परिवर्तन का क्या प्रभाव होगा। अनुच्छेद 270 में कहा गया है कि भारत सरकार भारत अधिराज्य की उत्तराधिकारिणी होगी। जब मैंने यह सुझाव उपस्थित किया था कि इन शब्दों के स्थान में ''भारतीय संघ'' अथवा ''भारतीय गणराज्य'' शब्द रखे जायें, तो उसे सभा ने स्वीकार नहीं किया था। इसलिये जहां तक आस्तियों, दायित्वों और आभारों का सम्बन्ध है, हमने अनुच्छेद 270 के अधीन यह स्वीकार किया है कि भारत सरकार भारत अधिराज्य की उत्तराधिकारिणी है। किन्तु अनुच्छेद 274 में यह कहा गया है कि व्यवहारवाद उपस्थित करने और अपने विरुद्ध उपस्थित होने का सम्बन्ध है भारत सरकार से न होगा, बल्कि भारतीय संघ से होगा। जब तक भारत सरकार का अधिनियम प्रवर्तन में था, जब कभी भारत सरकार के विरुद्ध व्यवहारवाद उपस्थित किया जाता था,

अथवा उसे व्यवहार-वाद उपस्थित करना होता था, तो यह भारत मंत्री के नाम से किया जाता था। मैं यह कह नहीं सकता कि संघ के विरुद्ध व्यवहार वाद क्यों उपस्थित किया जाये और भारत सरकार के विरुद्ध क्यों न उपस्थित किया जाये। आखिर, भारतीय संघ है क्या? अनुच्छेद 2 में कहा गया है कि भारत एक राज्य-संघ होगा। विधि के अन्तर्गत जब व्यवहार-वाद उपस्थित किया जाता है, तो पूरे निकाय के विरुद्ध, संघीय सरकार के पूरे निगम-निकाय के विरुद्ध उपस्थित किया जाता है। विधि के अन्तर्गत संघ कोई ऐसा निगम नहीं है, जो व्यवहार-वाद उपस्थित कर सकता है अथवा जिसके विरुद्ध व्यवहार-वाद उपस्थित हो सकता है। केवल संघीय सरकार ही व्यवहार-वाद उपस्थित कर सकती है और उसके विरुद्ध व्यवहार-वाद उपस्थित हो सकता है। अनुच्छेद 1 के प्रकाश में यदि विधि की दृष्टि से हम ठीक-ठीक और उपयुक्त शब्दावली प्रयोग करना चाहते हैं, तो हमें इस अनुच्छेद में ''भारतीय संघ की सरकार'' शब्द रखने चाहिये। किन्तु वर्तमान शब्दावली से भी आशय स्पष्ट हो जाता है और इसलिये समझदारी इसी में है कि ''भारत सरकार'' पदावली को रहने दिया जाये, न कि उसके स्थान में ''संघीय सरकार'' पदावली रखी जाये, जैसा कि संशोधन संख्या 2980 द्वारा प्रस्ताव किया गया है।

जहां तक डा. अम्बेडकर के अन्य संशोधनों का सम्बन्ध है, उनमें कुछ बातें अस्पष्ट हैं। यदि डा. अम्बेडकर अनुच्छेद 270 को देखें तो उन्हें विदित होगा कि वह राज्यपालों के प्रान्तों के सम्बन्ध में है। इस अनुच्छेद में हमने प्रान्तों का उल्लेख किया है। मेरे विचार से यह एक गलती है। जहां तक विधि की शब्दावली का सम्बन्ध है, मेरे विचार से प्रान्तों का उल्लेख राज्यपालों के प्रान्तों के रूप में होना चाहिये और केवल प्रान्तों के रूप में न होना चाहिये। यदि हम प्रथम अनुसूची के भाग 1 को देखें तो हमें विदित होगा कि उसमें प्रांतों का उल्लेख राज्यपालों के प्रान्तों के रूप में है।

श्रीमान्, अब मैं इस अनुच्छेद के खण्ड (2) को उठाता हूं। इस खण्ड के सम्बन्ध में जो संशोधन उपस्थित किया गया है, उसकी संख्या 207 है। हम कह नहीं सकते कि जिस समय संविधान प्रवर्तन में आयेगा उस समय स्थिति क्या होगी। खण्ड (2) का उपखण्ड (ख) राज्यपालों के प्रान्तों के सम्बन्ध में है और डा. अम्बेडकर के संशोधन के अधीन उसका सम्बन्ध देशी राज्यों से भी हो जायेगा। यह एक काल्पनिक उदाहरण है, किन्तु यदि किसी ऐसे देशी राज्य के सम्बन्ध में, जो संविधान के प्रवर्त्तन में आने के समय भारतीय संघ का एकक हो, कोई ऐसी न्यायिक कार्यवाही लम्बित हो जिसमें वह देशी राज्य एक पक्ष हो और यदि बाद में अनुच्छेद 3 के अधीन अथवा किसी अन्य प्रकार संसद विधि द्वारा, इस राज्य को किसी प्रान्त में समाविष्ट करने अथवा उपखण्ड (ख) के अधीन तत्स्थानी किसी देशी राज्य में समाविष्ट करने के सम्बन्ध में उपबन्ध रखे, तो उस राज्य का क्या होगा, जिसका निकटवर्ती प्रांत में समाविष्ट होने के कारण लोप हो जायेगा? इस प्रकार का कोई तत्स्थानी राज्य न रह जायेगा।

ये सब बातें इस समय अस्पष्ट हैं और इसी कारण मेरे विचार से समझदारी इसी में है कि इस अध्याय पर विचार-विमर्श उस समय तक स्थगित रखा जाये जब तक कि सब बातें स्पष्ट न हो जायें और राज्यों तथा संघ के भी सम्बन्ध स्पष्ट न हो जायें। किन्तु

[श्री एच.वी. कामत]

कुछ अनुच्छेद उपस्थित किये जा चुके हैं और उन्हें सभा स्वीकार कर चुकी है। मेरा यह निवेदन है कि इस अनुच्छेद में कुछ बातें अस्पष्ट हैं और मुझे आशा है कि इसके पूर्व कि यह अनुच्छेद स्वीकार किया जाये डा. अम्बेडकर अथवा उनके कोई सहकारी महोदय सभा के सम्मुख इन बातों को स्पष्ट करेंगे।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** श्रीमान्, मुझे केवल एक ही विषय के सम्बन्ध में कुछ कहना है। अनुच्छेद 274(1) में 'इस संविधान से दी हुई शक्तियों के आधार पर' शब्द बिल्कुल अनावश्यक और निरर्थक हैं क्योंकि न तो संसद और न किसी राज्य का विधान-मंडल बिना इस संविधान से दी हुई शक्तियों के कार्य कर सकते हैं। इसलिये मेरा यह सुझाव है कि ये शब्द निकाल दिये जायें।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, उचित यह होगा कि मैं सभा के सम्मुख इस अनुच्छेद को उस रूप में पढ़ कर सुनाऊं जैसा कि यह मेरे विभिन्न संशोधनों को समाविष्ट करने से ही जायेगा। अनुच्छेद इस प्रकार हो जायेगा:

> ''भारत संघ के नाम से, भारत सरकार व्यवहार-वाद ला सकेगी अथवा उसके विरुद्ध व्यवहार-वादी लाया जा सकेगा तथा इस समय प्रथम अनुसूची के भाग 1 अथवा भाग 2 में उल्लिखित किसी राज्य के नाम से, उस राज्य की सरकार व्यवहार-वाद ला सकेगी अथवा उसके विरुद्ध व्यवहार-वाद लाया जा सकेगा, तथा इस संविधान से दी हुई शक्तियों के आधार पर, संसद द्वारा ऐसे राज्य के विधान मंडल द्वारा, जो अधिनियम बनाया जाये, उसके उपबंधों के अधीन रहते हुए वे अपने अपने कार्यों के बारे में उसी प्रकार व्यवहार-वाद ला सकेंगे, अथवा उनके विरुद्ध उसी प्रकार व्यवहार-वाद लाया जा सकेगा, जिस प्रकार भारत अधिराज्य और तत्स्थानी प्रान्त अथवा तत्स्थानी देशी राज्य व्यवहार-वाद ला सकते अथवा उनके विरुद्ध व्यवहार-वाद लाया जा सकता, यदि इस संविधान को अधिनियम का रूप न दिया गया होता।
>
> (2) यदि इस संविधान के प्रारम्भ पर—
>
> (क) कोई ऐसी विधि कार्यवाहियां लम्बित हैं जिसमें भारत अधिराज्य एक पक्ष है, तो उन कार्यवाहियों में उक्त अधिराज्य के स्थान में भारत संघ समझा जायेगा, तथा
>
> (यह एक नई बात है–)
>
> (ख) कोई ऐसी विधि-कार्यवाहियां लम्बित हैं, जिनमें कोई प्रान्त या कोई देशी राज्य एक पक्ष है, तो उन कार्यवाहियों में उस प्रान्त या देशी राज्य के स्थान में तत्स्थानी राज्य समझा जायेगा।''

यह स्पष्ट है कि इस अनुच्छेद में यह निर्धारित किया गया है कि व्यवहार-वाद और कार्यवाहियां किस प्रकार आरम्भ की जायेंगी, इसका और कोई महत्त्व नहीं है। आरम्भ में ये शब्द थे कि भारत सरकार के नाम से व्यवहार-वाद लाया जायेगा। यह स्पष्ट है कि

भारत सरकार अर्थात् कार्यपालिका सरकार एक अस्थायी निकाय होगी। एक समय जो सरकार पदारूढ़ होगी वह आगे चल कर लुप्त हो जायेगी और कुछ अन्य लोग आयेंगे जो कार्यपालिका का भार सम्भालेंगे।

***श्री एच.वी. कामतः** सरकार अस्थायी न होगी, सरकार के पदाधिकारी भले ही अस्थायी हो सकते हैं।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** भारत सरकार और भारतीय संघ में अन्तर है। भारत सरकार, विधि की दृष्टि से एकक नहीं है, भारतीय संघ विधि की दृष्टि से एकक है। वह एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न एकक है और उसके अधिकार तथा आभार हैं। इसलिये यह उचित ही है कि केन्द्रीय सरकार के विरुद्ध जो कोई व्यवहार-वाद लाया जाये वह संघ के नाम से लाया जाये अथवा संघ के विरुद्ध लाया जाये।

''तत्स्थानी राज्य'' पदावली के सम्बन्ध में कुछ आपत्ति की गई है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह कहना कठिन होगा कि कौन राज्य पुराने राज्य का तत्स्थानी राज्य होगा। इस कठिनाई को दूर करने के लिये अनुच्छेद 303 (1) (6) में उपबंध रखा गया है, जो संविधान के मसौदे के पृष्ठ 145 पर देखा जा सकता है। वह इस प्रकार है कि तत्स्थानी प्रान्त अथवा तत्स्थानी राज्य से संशयात्मक दशाओं में अभिप्रेत है ऐसा प्रान्त या राज्य जिसे प्रश्नास्पद विशिष्ट प्रयोजन के लिये राष्ट्रपति यथास्थिति तत्स्थानी प्रान्त अथवा तत्स्थानी राज्य निर्धारित करे। चूंकि क्षेत्र आदि में कुछ परिवर्तन होंगे और यह कहना कठिन है कि पुराने प्रान्त अथवा राज्य का तत्स्थानी प्रान्त अथवा राज्य कौन होगा इसलिये यह कठिनाई राष्ट्रपति को यह निर्धारित करने की शक्ति देने से ही दूर हो सकती है कि किसी पुराने राज्य का तत्स्थानी राज्य कौन है। इसी कारण यह उपबंध रखा गया है।

उपखण्ड (2) लम्बित कार्यवाहियों के सम्बन्ध में है और उसमें केवल यह सुझाव रखा गया है कि जब कभी कोई कार्यवाहियां लम्बित हों और जब व्यवहार-वाद लाने वाले पक्ष अथवा जिनके विरुद्ध व्यवहार-वाद लाया जाये वे पक्ष उन पक्षों से भिन्न हों जिनके सम्बन्ध में हमने उपखण्ड (1) में उपबन्ध रखे हैं, तो पुरानी कार्यवाहियों में भारतीय संघ अथवा तत्स्थानी राज्य शब्द प्रविष्ट किये जायेंगे ताकि राज्यों के विरुद्ध अनुच्छेद 274 (1) के अधीन व्यवहार-वाद लाया जा सके। मेरे माननीय मित्र श्री सन्तानम् ने यह आपत्ति की है कि 'इस संविधान से दी हुई शक्तियों के आधार पर' शब्द बिल्कुल अनावश्यक हैं और इसके सम्बन्ध में मुझे केवल यह कहना है कि मैं उनके कथन से सहमत नहीं हूं और मेरे विचार से ये शब्द बहुत आवश्यक हैं।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि:

> ''अनुच्छेद 274 के खण्ड (1) में दूसरी जगह जहां पर 'Government of India' (भारत सरकार) शब्द आये हैं उनके स्थान पर 'Union of India' (भारतीय संघ) शब्द रखे जायें।''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 274 के खण्ड (2) के उपखण्ड (क) में 'Government of India' (भारत सरकार) शब्दों के स्थान पर 'Union of India' (भारतीय संघ) शब्द रखे जायें।''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2980 के सम्बन्ध में अनुच्छेद 274 के खंड (1) में 'Part I' (भाग 1) शब्द और अंक के बाद 'or Part III' (अथवा भाग 3) शब्द और अंक प्रविष्ट किये जायें।''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2980 और 2981 के सम्बन्ध में अनुच्छेद 274 के खण्ड (1) में 'by the Legislature' (विधान मंडल द्वारा) शब्दों के स्थान पर 'of the Legislature' (विधान-मंडल का) शब्द रखे जायें।''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''उपरोक्त संशोधन संख्या 204 के सम्बन्ध में अनुच्छेद 274 के खण्ड (1) में 'corresponding Provinces' (तत्स्थानी प्रान्तों) शब्दों के बाद 'or the corresponding Indian States' (अथवा तत्स्थानी देशी राज्य) शब्द प्रविष्ट किये जायें।''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''उपरोक्त संशोधन संख्या 206 के सम्बन्ध में अनुच्छेद 274 के खण्ड (2) के उपखण्ड (ख) में–

(1) 'a Province' (कोई प्रान्त) शब्दों के बाद 'or an Indian State' (अथवा कोई देशी राज्य) शब्द प्रविष्ट किये जायें; और

(2) 'The Province' (प्रांत) शब्दों के बाद 'or the Indian State' (अथवा देशी राज्य) शब्द प्रविष्ट किये जायें।''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 274, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 274, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया गया।

नवीन अनुच्छेद 274-क

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मैं यह चाहता हूं कि इस अनुच्छेद पर विचार-विमर्श स्थगित किया जाये।

***अध्यक्ष:** इसके अतिरिक्त श्री सिधवा का एक लम्बा संशोधन है जिसका उद्देश्य एक नवीन भाग प्रविष्ट करना है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मैं यह सुझाव रखता हूं कि सभा भाग 13 निर्वाचन विषयक अध्याय को उठाये, अर्थात् जैसा कि कार्यावली में अंकित है अनुच्छेद 289 पर और उसके आगे के अनुच्छेद पर विचार किया जाये।

***श्री आर.के. सिधवा:** श्रीमान्, मैं जिस नवीन अनुच्छेद को उपस्थित करना चाहता हूं उसका सम्बन्ध स्थानीय क्षेत्रों अर्थात् सारे भारत के राज्य क्षेत्र के शहरी और देहाती क्षेत्रों के परिसीमन से है।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** इसे स्थगित किया जा रहा है।

***श्री आर.के. सिधवा:** तब श्रीमान्, मैं उसे उस समय उपस्थित करूंगा जब कि तत्सम्बन्धी अनुच्छेद उठाया जायेगा।

अनुच्छेद 289

***अध्यक्ष:** अब हम भाग 13-अनुच्छेद 289 को उठाते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** क्या मैं यह सुझाव रख सकता हूं कि संशोधन संख्या 99 को पहले उठाया जाये क्योंकि उससे पूरे अनुच्छेद के स्थान पर दूसरा अनुच्छेद प्रविष्ट हो जाता है? अन्य सभी संशोधनों पर उसके बाद विचार किया जाये।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

''अनुच्छेद 289 के स्थान पर निम्नलिखित रखा जाये:

'289. *Superintendence, directions and control of elections to be vested in an election commission*—(1) The superintendence, direction and control of preparation of the electoral rolls for, and the conduct of, all elections to

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

Parliament and to the Legislature of every State and of elections to the office of President and Vice-President held under this Constitution, including the appointment of election tribunals for the decision of doubts and disputes arising out of or in connection with elections to Parliament and to the Legislatures of States shall be vested in a Commission (referred to in this Constitution as the Election Commission) to be appointed by the President.

(2) The Election Commission shall consist of the Chief Election Commissioner and such number of other Election Commissioners, if any, as the President may, from time to time appoint, and when any other Election Commissioner is so appointed, the Chief Election Commissioner shall act as the Chairman of the Commission.

(3) Before each general election to the House of the People and to the Legislative Assembly of each State and before the first general election and thereafter before each biennial election to the Legislative Council of each State having such Council, the President shall also appoint after consultation with the Election Commission such Regional Commissioners as he may consider necessary to assist the Election Commission in the performance of the functions conferred on it by clause (1) of this article.

(4) The conditions of service and tenure of office of the Election Commissioners and the Regional Commissioners shall be such as the President may by rule determine:

Provided that the Chief Election Commissioner shall not be removed from office except in like manner and on the like grounds as a judge of the Supreme Court and the conditions of the service of the Chief Election Commissioner shall not be varied to his disadvantage after his appointment:

Provided further that any other Election Commissioner or a Regional Commissioner shall not be removed from office except on the recommendation of the Chief Election Commissioner.

(5) The President or the Governor or Ruler of a State shall, when so requested by the Election Commission, make available to the Election Commission or to a Regional Commissioner such staff as may be necessary for the discharge of the functions conferred on the Election Commission by clause (1) of this article.' "

[289. *निर्वाचनों का अधीक्षण, निदेशन और नियंत्रण निर्वाचन आयोग में निहित होंगे*— (1) इस संविधान के अधीन संसद और प्रत्येक राज्य के विधान-मंडल के लिये नामावली तैयार कराने का तथा उन समस्त निर्वाचनों के संचालन का तथा राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के पदों के निर्वाचनों का अधीक्षण, निदेशन और नियंत्रण, जिसके अन्तर्गत संसद के तथा राज्यों के विधानमंडलों के निर्वाचनों से उदभूत या संसक्त सन्देहों और विवादों के निर्णय के लिये निर्वाचन-न्यायाधिकरण की नियुक्ति भी है, एक आयोग में निहित होगा (जो इस संविधान में "निर्वाचन आयोग" के नाम से निर्दिष्ट है।)

(2) निर्वाचन आयोग मुख्य निर्वाचन आयुक्त तथा, यदि कोई हो तो, अन्य उतने निर्वाचन आयुक्तों से, जितने कि राष्ट्रपति समय-समय पर नियत करे, मिल कर बनेगा और जब कोई अन्य निर्वाचन आयुक्त इस प्रकार नियुक्त किया गया हो तब मुख्य निर्वाचन आयुक्त निर्वाचन-आयोग के सभापति के रूप में कार्य करेगा।

(3) लोक-सभा तथा प्रत्येक राज्य की विधान-सभा के प्रत्येक साधारण निर्वाचन से पूर्व, तथा विधान-परिषद् वाले प्रत्येक राज्य की विधान-परिषद् के लिये पहले साधारण निर्वाचन तथा तत्पश्चात् प्रत्येक द्विवार्षिक निर्वाचन से पूर्व राष्ट्रपति निर्वाचन-आयोग से परामर्श करके खंड (1) द्वारा निर्वाचन-आयोग को दिए गये कृत्यों के पालन में आयोग की सहायता के लिये ऐसे प्रादेशिक आयुक्त भी नियुक्त कर सकेगा जैसे वह आवश्यक समझे।

(4) संसद द्वारा निर्मित किसी विधि के उपबन्धों के अधीन रहते हुए निर्वाचनों आयुक्तों और प्रादेशिक आयुक्तों की सेवा की शर्तें और पदावधि ऐसी होंगी जैसी कि राष्ट्रपति नियम द्वारा निर्धारित करे:

परन्तु मुख्य निर्वाचन-आयुक्त पद से वैसे कारणों और वैसी रीति के बिना न हटाया जायेगा जैसे कारणों और रीति से उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश हटाया जा सकता है तथा मुख्य निर्वाचन-आयुक्त की अपनी नियुक्ति के पश्चात् उसकी सेवा की शर्तों में उसको अलाभकारी कोई परिवर्तन न किया जायेगा:

परन्तु यह और भी कि किसी अन्य निर्वाचन-आयुक्त या प्रादेशिक आयुक्त को मुख्य निर्वाचन आयुक्त की सिफारिश के बिना पद से हटाया न जायेगा।

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

(5) जब निर्वाचन आयोग ऐसी प्रार्थना करे तब, राष्ट्रपति या किसी राज्य का राज्यपाल या राजप्रमुख निर्वाचन आयोग या प्रादेशिक आयुक्त को ऐसे कर्मचारी वृन्द प्राप्य करायेगा जैसे कि खंड (1) द्वारा निर्वाचन-आयोग को दिये गये कृत्यों के लिये आवश्यक हो।]

***अध्यक्ष:** मुझे कई संशोधनों की सूचना दी गई है। कुछ का उद्देश्य यह है कि अनुच्छेद 289, 290 और 291 के स्थान पर अन्य अनुच्छेद प्रविष्ट किये जायेंगे और कुछ संशोधन उन संशोधनों पर हैं जो उपस्थित किये जायें। मेरे विचार से मुझे उन संशोधनों को पहले उठाना चाहिये जिनका उद्देश्य यह है कि इन अनुच्छेदों के स्थान पर अन्य अनुच्छेद रखे जायें। डा. अम्बेडकर एक संशोधन उपस्थित कर चुके हैं। एक अन्य संशोधन पंडित ठाकुरदास भार्गव के नाम से है।

***पं. हृदयनाथ कुंजरू** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): श्रीमान्, क्या मैं यह पूछ सकता हूं कि डा. अम्बेडकर ने जो प्रस्ताव उपस्थित किया है उसके सम्बन्ध में क्या वे कुछ कहने नहीं जा रहे हैं? उसका सम्बन्ध एक महत्त्वपूर्ण विषय से है। क्या यह उचित नहीं है कि अनुच्छेद 289 के सम्बन्ध में डा. अम्बेडकर ने जो संशोधन उपस्थित किया है उसके सम्बन्ध में वे कुछ कहें? मेरे विचार से उचित यही होगा कि वे सभा को यह बताने का कष्ट करें कि वे अनुच्छेद 289 के स्थान पर एक नवीन अनुच्छेद को किस कारण प्रविष्ट करना चाहते हैं। यह एक बहुत महत्त्वपूर्ण विषय है और यह खेद की बात है कि इस प्रस्ताव के सम्बन्ध में डा. अम्बेडकर ने कुछ भी कहना उचित नहीं समझा।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** अध्यक्ष महोदय, इस प्रस्ताव के समर्थन में मैंने दो कारणों से कुछ कहना उचित नहीं समझा। एक कारण यह है कि यदि इस अनुच्छेद के सम्बन्ध में वादानुवाद हुआ, जो अवश्य ही होगा, तो उस समय कुछ प्रश्न उठाये जायेंगे और मैंने यही उचित समझा कि मैं उनका अन्त में उत्तर दूं ताकि मेरे भाषण में उन्हीं तर्कों की पुनरुक्ति न हो। एक कारण यह है।

दूसरा कारण यह है कि मैंने यह विचार किया कि प्रत्येक सदस्य ने मेरा संशोधन पढ़ लिया होगा और चूंकि वह बहुत सरल है, इसलिये उसका आशय हर एक समझ गया होगा। यह स्पष्ट है कि मेरे माननीय मित्र पंडित कुंजरू जल्दी में इस अनुच्छेद के मेरे नये मसौदे को नहीं पढ़ पाये हैं।

***पं. हृदयनाथ कुंजरू:** मैंने उसकी प्रत्येक पंक्ति पढ़ी है। मैं केवल यह चाहता हूं कि माननीय सदस्य महोदय सभा के प्रति कुछ आदर भाव दिखायें।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** सभा को स्मरण होगा कि बहुत पहले संविधान सभा ने अपनी कार्यवाहियों में मूलाधिकारों पर विचार करने के लिये एक समिति नियुक्त करने का आयोजन किया था। उस समिति ने अपने प्रतिवेदन में यह लिखा था कि यह स्वीकार किया जाना चाहिये कि निर्वाचनों को स्वतंत्र रूप से करना तथा विधान-मंडल

के निर्वाचनों में कार्यपालिका का हस्तक्षेप न होने देना एक मूलाधिकार है और इसे मूलाधिकार विषयक अध्याय में समाविष्ट करना चाहिये। जब यह विषय सभा के सामने रखा गया तो सभा ने यह मत प्रकट किया कि यद्यपि इसमें किसी को आपत्ति नहीं हो सकती कि यह एक आधारभूत महत्त्व का विषय है किन्तु इसे संविधान के किसी अन्य भाग में स्थान देना चाहिये न कि मूलाधिकार विषयक अध्याय में। सभा ने बिना किसी प्रकार की असहमति प्रकट किये हुए इसकी पुष्टि की कि विधान मंडलों के लिये स्वतंत्र तथा शुद्ध रूप से निर्वाचनों को करने के लिये यह बहुत आवश्यक है कि उनमें तत्कालीन कार्यपालिका का किसी प्रकार का हस्तक्षेप न हो। सभा के इस निर्णय को देखते हुए मसौदा समिति ने इस विषय को मूलाधिकारों के अध्याय से निकाल दिया और उसे एक पृथक भाग में, जिसमें अनुच्छेद 289, 290 आदि है स्थान दिया। इसलिये जहां तक इस आधारभूत प्रश्न का सम्बन्ध है कि निर्वाचन-संगठन पर कार्यपालिका सरकार का कोई नियंत्रण न होना चाहिये, किसी प्रकार का मतभेद नहीं था। अनुच्छेद 289 में संविधान-सभा के उसी निर्णय का समावेश है। उसके द्वारा संसद के तथा राज्यों के विधान मंडलों के निर्वाचनों के अधीक्षण, निदेशन तथा नियंत्रण तथा उनके लिये नामावली तैयार करने का अधिकार कार्यपालिका के अतिरिक्त एक निकाय को सौंपा गया है जो निर्वाचन-आयोग कहा जायेगा। उपखण्ड (1) में यही उपबन्ध है।

उपखण्ड (2) में कहा गया है कि एक मुख्य निर्वाचन आयुक्त तथा उतने अन्य निर्वाचन आयुक्त होंगे जितने राष्ट्रपति समय-समय पर नियुक्त करे। मसौदा समिति के सामने दो विकल्प थे, अर्थात् या तो एक स्थायी निकाय को स्थापित करना जिसमें निर्वाचन आयोग के चार या पांच सदस्य हों जो बराबर पदासीन रहें, या निर्वाचन काल में एक तदर्थ निकाय को स्थापित करने की शक्ति राष्ट्रपति को देना। समिति ने मध्य के मार्ग का अवलम्बन किया। उपखण्ड (2) द्वारा मसौदा समिति ने यही प्रस्ताव किया है कि एक व्यक्ति को, अर्थात् मुख्य निर्वाचन आयुक्त को, स्थायी रूप से पदासीन रखा जाये ताकि निर्वाचन संगठन सूक्ष्म रूप में हमेशा उपलब्ध रहे। इसमें कोई सन्देह नहीं कि साधारणतया प्रत्येक पांच वर्ष के पश्चात् निर्वाचन होंगे किन्तु यह प्रश्न भी है कि उप निर्वाचन किसी समय हो सकते हैं पांच वर्ष समाप्त होने के पूर्व ही विधान सभा विघटित हो सकती है। इसलिये निर्वाचन नामावली को हर समय तैयार रखना होगा ताकि नया निर्वाचन बिना किसी कठिनाई के हो सके। इसलिये इन आकस्मिक स्थितियों को ध्यान में रखते हुए यह पर्याप्त होगा कि एक पदाधिकारी, जो मुख्य निर्वाचन आयुक्त के नाम से कहा जायेगा, स्थायी रूप से पदासीन रहे और जब निर्वाचन हों तब राष्ट्रपति अन्य लोगों को नियुक्त करके निर्वाचन आयोग में सम्मिलित कर सकता है।

इसके अतिरिक्त, श्रीमान्, आरम्भ में अनुच्छेद 289 के अधीन यह आयोजन था कि केन्द्रीय विधान मंडल के उत्तर और अवर दोनों सभाओं के निर्वाचनों के लिये एक आयोग हो और प्रत्येक प्रान्त तथा राज्य के लिये एक पृथक निर्वाचन आयोग हो जिसे राज्यपाल अथवा राज्य का राजप्रमुख नियुक्त करे। उसमें तथा अनुच्छेद 289 के वर्तमान रूप में निस्संदेह आधारभूत अन्तर है। इस अनुच्छेद के अधीन यह प्रस्ताव रखा गया है कि निर्वाचन संगठन एक ही आयोग के हाथ में रखा जाये और उसकी सहायता प्रादेशिक आयुक्त करे जो

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

प्रान्तीय सरकार के अधीन रह कर कार्य न करे बल्कि केन्द्रीय निर्वाचन आयोग के अधीक्षण तथा नियंत्रण में कार्य करे। जैसा कि मैं कह चुका हूं यह एक आधारभूत परिवर्तन है। किन्तु यह परिवर्तन आवश्यक हो गया है क्योंकि हम यह देखते हैं कि इस समय भारत के कुछ प्रान्तों में मिश्रित जन समुदाय है। उनमें एक तो वे लोग बसते हैं जो आरम्भ से वहां के निवासी हैं उनके साथ ऐसे लोग भी रहते हैं जिनका मूलवंश तथा जिनकी भाषा तथा संस्कृति उन बहुसंख्यक लोगों से भिन्न है जो वहां के निवासी हैं। मसौदा समिति तथा केन्द्रीय सरकार के ध्यान में यह बात लाई गई है कि ऐसे प्रान्तों में कार्यपालिका सरकार इस प्रकार से प्रबन्ध कर रही है अथवा इस प्रकार से प्रबन्ध करने का आदेश दे रही है कि ये लोग जिनका मूलवंश तथा जिनकी भाषा और संस्कृति वहां के निवासियों से भिन्न है, निर्वाचन नामावलियों में स्थान नहीं दिये जा रहे हैं। मैं आशा करता हूं कि सभा यह समझती है कि मताधिकार ही जनतंत्र का आधार स्तम्भ है। हमारे संविधान के अधीन वर्णित अवस्थाओं में 21 वर्ष की आयु का यदि कोई वयस्क मतदाता के रूप में निर्वाचन नामावली में स्थान दिया जा सकता है तो उसे किसी स्थानीय सरकार के विद्वेष के कारण अथवा किसी पदाधिकारी की सनक के कारण इस अधिकार से वंचित न किया जाना चाहिये। यदि यह हुआ तो इससे जनतंत्रात्मक सरकार के मूल पर ही आघात होगा। इसलिये ताकि किसी प्रान्त के ऐसे लोगों के प्रति जिनका मूलवंश तथा जिनकी भाषा और संस्कृति वहां के निवासियों से भिन्न हो प्रान्तीय सरकारें अन्याय न कर सकें। यह उचित समझा गया कि उस मूल प्रस्ताव को स्वीकार न किया जाये जिसके अधीन प्रत्येक प्रान्त के लिये तक पृथक निर्वाचन आयोग स्थापित किया जाता और उसका पथप्रदर्शन राज्यपाल और स्थानीय सरकार द्वारा होता। इसी कारण इस अनुच्छेद में परिवर्तन किया गया है और अब इसके अधीन यह आयोजन है कि निर्वाचन का पूरा संगठन केन्द्रीय निर्वाचन आयोग के हाथ में हो और वह आयोग निर्वाचक-पदाधिकारियों, मतग्राही पदाधिकारियों और निर्वाचक- नामावली के पर्यावलोकन में लगे हुए अन्य लोगों को निदेश दे ताकि भारत के किसी ऐसे नागरिक के प्रति अन्याय न हो सके, जिसे संविधान के अधीन निर्वाचक-नामावली में अपना नाम प्रविष्ट कराने का अधिकार हो। संविधान के मसौदे के वर्तमान उपबन्धों में यही एक आधारभूत परिवर्तन किया गया है।

जहां तक खण्ड (4) का सम्बन्ध है, हमने यह राष्ट्रपति पर छोड़ दिया है कि वह निर्वाचन आयोग के सदस्यों की सेवा की शर्तें तथा पदावधि निश्चित करे किन्तु एक दो शर्तें भी रख दी हैं और इसका उल्लेख कर दिया है कि मुख्य निर्वाचन आयुक्त उन्हीं दशाओं में हटाया जा सकेगा जिन दशाओं में उच्चतम न्यायालय का कोई न्यायाधीश हटाया जा सकता है। यदि इस सभा का उद्देश्य यह है कि निर्वाचन-सम्बन्धी मामलों पर तत्कालीन कार्यपालिका सरकार का नियंत्रण न रहे तो यह अत्यंत आवश्यक है कि हम जिस नवीन संगठन को, अर्थात् निर्वाचन-आयोग को, स्थापित करने जा रहे हैं उसे कार्यपालिका स्वेच्छा से विघटित न कर सके। इसलिये जहां तक पदच्युत होने का प्रश्न है, हमने उसके सम्बन्ध में मुख्य निर्वाचन-आयुक्त की वही प्रतिष्ठा निश्चित की है जो उच्चतम न्यायालय के

न्यायाधीशों की है। किन्तु हम इस आयोग के अन्य सदस्यों को यह प्रतिष्ठा प्राप्त कराने नहीं जा रहे हैं। हमने यह राष्ट्रपति पर छोड़ दिया है कि वह जिन दशाओं में भी उचित समझे, निर्वाचन-आयोग के अन्य सदस्यों को पदच्युत करे, हमने केवल एक शर्त रखी है और वह यह है कि मुख्य निर्वाचन आयुक्त को इस आशय की सिफारिश देनी होगी कि अमुक व्यक्ति को पदच्युत करना उचित तथा न्यायपूर्ण है।

इसके अतिरिक्त हमें यह प्रश्न भी हल करना था कि जो कार्य निर्वाचन आयोग को सौंपा गया है उसे पूरा करने के लिये उसे स्वतंत्र रूप से अपने कर्मचारी रखने का प्राधिकार प्राप्त होना चाहिये अथवा नहीं। यह अनुभव किया गया कि यदि निर्वाचन आयोग को, निर्वाचक-नामावली तैयार करने, निर्वाचक नामावलियों का पर्यावलोकन करने और निर्वाचनों के संचालन आदि का कार्य करने के लिये स्वतंत्र रूप से कर्मचारी वर्ग रखने का प्राधिकार दिया गया तो दो स्थानों पर कर्मचारी-वर्ग एक ही कार्य करेंगे जिससे प्रशासन-व्यय व्यर्थ में बढ़ जायेगा। यह धन बड़ी आसानी से बचाया जा सकता है क्योंकि, जैसा कि मैं कह चुका हूं, निर्वाचन-आयोग के पास कभी तो बहुत काम होगा और कभी कुछ भी काम न होगा। इसलिये खण्ड (5) में हमने यह उपबन्धित किया है कि निर्वाचन-आयोग को इसकी स्वतंत्रता होगी कि वह प्रान्तीय सरकारों से, दफ्तर के काम के लिये ऐसे कर्मचारियों को ले जिनकी उसे अपने काम को पूरा करने के लिये आवश्यकता हो। जब काम पूरा हो जायेगा तो ये कर्मचारी प्रान्तीय सरकार को वापस कर दिये जायेंगे। किन्तु जब तक ये लोग निर्वाचन आयोग के अधीन कार्य करेंगे तब तक उसी के प्रशासन के अधीन रहेंगे और कार्यपालिका सरकार के प्रशासन के अधीन नहीं रहेंगे। इस अनुच्छेद में यही उपबन्ध है। मुझे आशा है कि सभा की समझ में अब यह आ गया होगा कि उनका अर्थ क्या है और उनमें तथा संविधान के मसौदे के मूल अनुच्छेदों में कितना अन्तर है।

***अध्यक्षः** पंडित ठाकुरदास भार्गव, क्या आप अपने संशोधन उपस्थित कर रहे हैं?

***पं. ठाकुरदास भार्गवः** जी नहीं, श्रीमान्।

***अध्यक्षः** श्री कपूर अपना संशोधन उपस्थित नहीं कर रहे हैं। अब इस अनुच्छेद पर विचार-विमर्श हो सकता है।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** मैंने अनुच्छेद 289 के सम्बन्ध में एक संशोधन पर एक संशोधन की सूचना दी है।

श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं किः

> ''सूची 1 (पांचवां सप्ताह) के संशोधन संख्या 99 में निम्नलिखित संशोधन समाविष्ट किये जायें:

(1) खण्ड (1) के अन्त में निम्नलिखित शब्द जोड़े जायें:

'Subject to confirmation by 2èk3rd majority in a joint session of both the Houses of Parliament.'

(संसद के दोनों सदनों के संयुक्त सत्र में सदस्यों के दो-तिहाई बहुमत के समर्थन के अधीन।)

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

(2) खण्ड (2) में 'appoint' (नियत करे) शब्द के बाद निम्नलिखित शब्द प्रविष्ट किये जायें:

'Subject to confirmation by 2èk3rd majority in a Joint Session of both the Houses of Parliament.'

(संसद के दोनों सदनों के संयुक्त सत्र में सदस्यों के दो-तिहाई बहुमत के समर्थन के अधीन।)

(3) खण्ड (3) में 'after consultation with' (से परामर्श करके) शब्दों के स्थान पर 'in concurrence with' (से सहमति प्राप्त करके) शब्द रखे जायें।

(4) खण्ड (4) में 'President may by rule determine' (राष्ट्रपति नियम द्वारा निर्धारित करे) शब्दों के स्थान पर 'Parliament may by law determine' (संसद विधि-द्वारा निर्धारित करे) शब्द रखे जायें।

(5) खण्ड (4) के परन्तुक (1) में 'Chief Election Commissioner' (मुख्य-निर्वाचन-आयुक्त) शब्द जिन दो स्थानों पर आये हैं उनके स्थान पर 'Election Commissioner' (निर्वाचन-आयुक्त) शब्द रखे जायें।

(6) खण्ड (4) के परन्तुक (2) में 'any other Election Commissioner or' (अन्य निर्वाचन-आयुक्त या) शब्द निकाल दिये जायें।''

अध्यक्ष महोदय, मैं डा. अम्बेडकर को उनके संशोधन के लिये बधाई देता हूं। जैसा कि वे कह चुके हैं, उनके संशोधन में मूलाधिकार-समिति की सिफारिशों को ही समाविष्ट किया गया है। वास्तव में यह विषय इतना महत्त्वपूर्ण है कि एक समय इसका उल्लेख मूलाधिकारों के ही अध्याय में करने का विचार किया गया था। उद्देश्य यह है कि संविधान में वयस्क मताधिकार की ही प्रत्याभूति न दी जाये बल्कि उसे यथोचित रूप से व्यवहार में लाने की भी प्रत्याभूति दी जाये। उन्होंने हमें बताया कि उन्होंने निर्वाचन-आयोग को कार्यपालिका से बिल्कुल पृथक करने का प्रयास किया है और इसलिये उन्हें आशा है कि इस प्रणाली के अधीन सभी लोगों को मत देने का न केवल मूलाधिकार प्राप्त हो जायेगा। बल्कि उसका यथोचित रूप से प्रयोग भी हो सकेगा, जिससे निर्वाचित सदस्य सच्चे अर्थ में देश के लोगों की भावनाओं का प्रतिनिधित्व करेंगे। इस संशोधन को ध्यानपूर्वक पढ़ने के पश्चात् मैंने अपने उपरोक्त संशोधनों का सुझाव रखा है ताकि डा. अम्बेडकर के संशोधन का वास्तविक उद्देश्य पूरा हो सके।

मेरे संशोधन का उद्देश्य यह है कि निर्वाचन-आयोग कार्यपालिका से बिल्कुल पृथक हो। इसमें सन्देह नहीं कि प्रान्तीय कार्यपालिकाओं से उसका कोई सम्बन्ध नहीं रहेगा किन्तु यदि राष्ट्रपति इस आयोग को नियुक्त करेगा तो इसका अर्थ यही है कि प्रधानमंत्री ही इस आयोग को नियुक्त करेगा। उसी की सिफारिश के आधार पर अन्य निर्वाचन आयुक्त नियुक्त किये जायेंगे। इस कारण वे स्वतंत्र रूप से कार्य न कर सकेंगे। इसमें कोई सन्देह

नहीं कि मुख्य निर्चाचन-आयुक्त के एक बार नियुक्त होने पर उसे केवल दोनों सदनों के दो तिहाई बहुमत से पदच्युत किया जा सकता है अन्यथा नहीं। इससे नि:संदेह वह स्वतंत्र रूप से कार्य कर सकता है किन्तु यह भी सम्भव है कि कोई पदारूढ़ दल, जो आने वाले निर्वाचन में सफल होना चाहेगा, अपने दल के प्रति पक्की निष्ठा रखने वाले किसी व्यक्ति को मुख्य निर्वाचन-आयुक्त नियुक्त कर दे। बहुत गम्भीर आरोप लगाने पर ही उसे दोनों सदनों के दो-तिहाई बहुमत से पदच्युत किया जा सकता है, जिसका अर्थ है कि उसे पदच्युत करना बहुत कुछ असम्भव ही है। इसलिये मैं यह चाहता हूं कि जो व्यक्ति नियुक्त किया जाये वह सभी दलों का विश्वास-भाजन हो और उसकी नियुक्ति का समर्थन केवल बहुमत से ही न हो बल्कि दोनों सदनों के दो-तिहाई बहुमत से हो। यदि केवल साधारण बहुमत ही आवश्यक समझा गया तो पदारूढ़ दल से ही उसे बहुमत प्राप्त हो जायेगा। मैंने दो-तिहाई बहुमत का प्रस्ताव रखा है और उसका अर्थ यह है कि अन्य दल भी उसकी नियुक्ति के लिये सहमत हों। इससे आयोग स्वतंत्र रूप से कार्य कर सकेगा और विपक्ष उसके विरुद्ध कुछ न कह सकेगा। आयुक्तों तथा मुख्य निर्वाचन-आयुक्त को राष्ट्रपति को नियुक्त करना चाहिये किन्तु उसे उन लोगों के नाम प्रस्तावित करने चाहिये जिन्हें विधान-मंडलों के दोनों सदनों के दो-तिहाई बहुमत का समर्थन प्राप्त हो। इस प्रकार कोई ऐसा व्यक्ति नियुक्त नहीं हो सकता जो किसी दल-विशेष के प्रति निष्ठा रखता हो। मुख्य निर्वाचन आयुक्त केवल एक दल का विश्वास पात्र न होगा बल्कि विधान मंडल के अधिकांश सदस्यों को उस पर विश्वास होगा। तभी वह अपनी की हुई नियुक्तियों के लिये दो तिहाई बहुमत का समर्थन प्राप्त कर सकेगा। इसलिये, जैसी कि डा. अम्बेडकर ने अपना संशोधन उपस्थित करते हुए अपनी इच्छा प्रकट की है, यदि मूलाधिकार समिति की सिफारिशों के वास्तविक उद्देश्य को पूरा करना है तो मेरे विचार से उन्हें यह उपबन्धित करना चाहिये कि राष्ट्रपति नियुक्ति करेगा किन्तु संसद के दोनों सदन संयुक्त सत्र में, उपस्थित तथा मत देने वाले सदस्यों के दो-तिहाई बहुमत से उस नियुक्ति का समर्थन करेंगे।

***श्री महावीर त्यागी:** क्या आप यह नहीं समझते कि दल की ओर से किसी विशेष व्यक्ति को निर्वाचित करने के लिये आदेश निकाले जायेंगे? वह किसी दल विशेष का कोई व्यक्ति होगा।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** मैंने केवल यह कहा है: वह संसद का सदस्य न होगा। वह कोई भी व्यक्ति हो किन्तु जो कोई भी चुना जाये उसे संसद के दोनों सदनों के कम से कम दो-तिहाई बहुमत का विश्वास प्राप्त होना चाहिये ताकि पदारूढ़ दल अपने ही किसी आदमी को देश को स्वीकार करने के लिये बाध्य न कर सके।

***श्री महावीर त्यागी:** बहुसंख्यक दल अपने ही किसी आदमी को उस पद के लिये खड़ा करेगा और यह आदेश निकालेगा कि सब लोगों को उस अभ्यर्थी के लिये मत देन चाहिये। चाहे वह व्यक्ति उस दल का ही सदस्य हो अथवा बाहर का कोई आदमी हो किन्तु होगा वह उस दल का नामनिर्देशित व्यक्ति ही।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** बहुमत का अर्थ केवल 51 प्रतिशत बहुमत से है किन्तु मैं चाहता हूं कि दो-तिहाई सदस्यों का बहुमत हो।

***श्री महावीर त्यागी:** आपको दो-तिहाई से अधिक सदस्यों का बहुमत इस समय भी प्राप्त है।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** इस समय तो इस मामले में कुछ नहीं हो सकता। आप जिसे भी खड़ा करेंगे वह निर्वाचित हो जायेगा। किन्तु हम संविधान को केवल इस समय के लिये नहीं बना रहे हैं। हम उसे हमेशा के लिये बना रहे हैं। नि:संदेह आज यह स्थिति है कि मंत्रिमंडल की सिफारिश के आधार पर राष्ट्रपति जिस व्यक्ति को भी नियुक्त करेगा उसकी नियुक्ति का समर्थन हो जायेगा। सौभाग्य से हमारे प्रधानमंत्री महोदय स्वतंत्र विचार रखते हैं और निरपेक्ष हैं। इसलिये वे किसी उपयुक्त व्यक्ति को ही नियुक्त करवायेंगे। किन्तु हम कह नहीं सकते कि हमें हमेशा इसी प्रकार का प्रधानमंत्री प्राप्त होगा या नहीं। मैं यह चाहता हूं कि भविष्य में कोई प्रधानमंत्री इस अधिकार का दुरुपयोग न करे और इसलिये मैं चाहता हूं कि राष्ट्रपति के नामनिर्देशन का समर्थन दो-तिहाई बहुमत द्वारा हो। इसमें कोई सन्देह नहीं कि यदि किसी एक दल का अत्यधिक बहुमत होगा तो संकट उपस्थित हो सकता है। जैसा कि मैं कह चुका हूं, यह सम्भव है कि यदि प्रधानमंत्री चाहें तो वे अपने दल के ही किसी व्यक्ति को नियुक्त कर सकते हैं किन्तु मुझे विश्वास है कि वे यह नहीं करेंगे। यदि वे अपने ही दल के किसी व्यक्ति को नियुक्त करेंगे और यदि संयुक्त सत्र में समर्थन के लिये उस मामले को उपस्थित किया जायेगा तो थोड़ा सा विरोध होने पर भी अथवा स्वतंत्र सदस्यों के असहमति प्रकट करने से भी संसार के जनमत के सम्मुख प्रधानमंत्री का सर झुक जायेगा। चूंकि हमारा बहुमत है इसलिये सैद्धान्तिक रूप से हम किसी बात को भी पारित करा सकते हैं। इसलिये समर्थन की शर्त रखने से उपयुक्त व्यक्ति चुना जा सकेगा। मुझे आशा है कि बहुमत का उपयोग इस प्रकार न होगा कि उससे देश के हितों को हानि पहुंचे अथवा निर्वाचन आयोग की निरपेक्षता और स्वतंत्रता पर आघात हो। मैं चाहता हूं कि संविधान में इस आशय का एक उपबन्ध हो ताकि यदि भविष्य में यदि कोई प्रधानमंत्री पक्षपात करना भी चाहे तो न कर सके। इसलिये मैं यह चाहता हूं कि यह उपबन्धित किया जाये, कि जब कभी इस प्रकार की नियुक्ति करनी हो, नियुक्त व्यक्ति का नाम-निर्देशन राष्ट्रपति तो करे ही किन्तु साथ ही वह संसद के दोनों सदनों के दो-तिहाई बहुमत का विश्वास भी प्राप्त करे।

डा. अम्बेडकर ने दूसरी बात यह कही थी कि चूंकि इस आयोग के पास हमेशा काम नहीं रहेगा इसलिये केवल मुख्य निर्वाचन आयुक्त को ही स्थायी रूप से नियुक्त किया जाना चाहिये और जब कभी आवश्यकता हो अन्य लोगों को उसकी सिफारिश के आधार पर नियुक्त किया जाना चाहिये। हमारे संविधान में यह निर्धारित नहीं किया गया है कि चार वर्ष के उपरान्त अवश्य ही निर्वाचन होगा जैसा कि अमरीका में होता है। सम्भवत: किसी न किसी प्रान्त में हमेशा निर्वाचन होते रहेंगे। राज्यों के समाविष्ट होने पर हमारे लगभग तीस प्रांत हो जायेंगे। हमारे संविधान में यह उपबन्धित है कि अविश्वास का प्रस्ताव पारित होने पर विधान मंडल का विघटन हो जायेगा, इसलिये यह भी सम्भव है कि केन्द्र के लिये तथा प्रान्तों के विभिन्न विधान मंडलों के लिये निर्वाचन एक ही समय में न हों। हर समय कहीं न कहीं निर्वाचन होता रहेगा। यह हो सकता है कि आरम्भ में अथवा

पांच या दस वर्ष तक ऐसा न हो। किन्तु दस बारह वर्ष के पश्चात् हर समय किसी न किसी प्रांत में निर्वाचन होता रहेगा। इसलिये उपयुक्त यही होगा और कमखर्ची भी इसी में होगी कि एक निर्वाचन-आयोग स्थायी रूप से स्थापित किया जाये। केवल मुख्य निर्वाचन आयुक्त को ही स्थायी रूप से नियुक्त न किया जाये बल्कि आयोग के तीन से लेकर पांच तक अन्य सदस्यों को भी स्थायी रूप से नियुक्त किया जाये और वही निर्वाचनों का संचालन करें। मेरे विचार से काम की कमी न होगी क्योंकि, जैसा मैं कह चुका हूं, हमारे संविधान के अधीन निर्वाचन एक साथ न होगा। जब कभी विभिन्न विधान-मंडलों में अविश्वास प्रस्ताव पारित होंगे और उनके फलस्वरूप विधान मंडलों का विघटन होगा, उनके लिये निर्वाचन भी होंगे। इसलिये मेरे विचार से काम की कमी न होगी। यह आयोग एक स्थायी आयोग होना चाहिये और सभी आयुक्तों को उसी प्रकार नियुक्त किया जाना चाहिये जिस प्रकार मुख्य निर्वाचन आयुक्त नियुक्त किया जायेगा। वे सब विधान मंडल के दो-तिहाई बहुमत से नियुक्त होने चाहिये और इसी प्रकार पदच्युत भी किये जाने चाहिये।

खण्ड (3) में यह कहा गया है कि निर्वाचन आयोग से परामर्श करके राष्ट्रपति प्रादेशिक आयुक्तों को नियुक्त कर सकता है। इसका अर्थ यह है कि वह मुख्य निर्वाचन आयुक्त से परामर्श करेगा। केवल परामर्श करने का अर्थ यह है कि राष्ट्रपति मुख्य निर्वाचन आयुक्तों के मत की उपेक्षा भी कर सकता है और अपनी इच्छानुसार नियुक्तियां कर सकता है। इसलिये मैं चाहता हूं कि 'से सहमति प्राप्त करके' शब्द प्रविष्ट किये जायें ताकि यदि कोई असहमत हो, अर्थात् यदि किसी व्यक्ति के सम्बन्ध में निर्वाचन आयेाग और राष्ट्रपति के बीच मतभेद हो तो वह नियुक्त नहीं किया जा सकता है।

खण्ड (4) में कहा गया है कि ''प्रादेशिक आयुक्तों की सेवा की शर्तें और पदावधि ऐसी होगी जैसी कि राष्ट्रपति नियम द्वारा निर्धारित करे।'' मेरे विचार से यह उचित नहीं है। निर्वाचन-आयुक्तों की सेवा की शर्तें और पदावधि निर्धारित करने की शक्ति राष्ट्रपति को नहीं प्राप्त होनी चाहिये। यदि उसे यह शक्ति प्राप्त हुई तो वह अपने प्रभाव से उनकी स्वतंत्रता का अपहरण कर सकता है। इसलिये मैं यह चाहता हूं कि इन बातों को संसद विधि द्वारा निश्चित करे और यह आयुक्त स्थायी रूप से रखे जायें ताकि कोई भी व्यक्ति उन्हें पदच्युत करके उनके स्थान पर दूसरे लोगों को नियुक्त न कर सके और किसी भी निर्वाचन-आयुक्त को राष्ट्रपति की कृपा की अपेक्षा न रहे।

मेरे ये सुझाव हैं और मैंने ये इसी उद्देश्य से उपस्थित किये हैं कि निर्वाचन आयोग सच्चे अर्थ में एक स्वतंत्र आयोग हो सके और वयस्क मताधिकार के मूलाधिकार का यथोचित रूप से प्रयोग हो सके। डा. अम्बेडकर ने जो कुछ कहा है उससे मैं सहमत हूं किन्तु मैं केवल यह कहना चाहता हूं कि उनके उद्देश्य की पूर्ति के लिये उनके प्रस्ताव पर्याप्त न होंगे।

***श्री एस.वी. पातस्कर** (बंबई : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरे आदरणीय मित्र डा. अम्बेडकर ने जो नवीन संशोधन, अर्थात् संशोधन संख्या 99 उपस्थित किया है उसे मैंने ध्यानपूर्वक पढ़ा है और उनके तर्कों को भी मैंने ध्यानपूर्वक सुना है। यद्यपि मैं उसके

[श्री एच.वी. पातस्कर]

इस विचार से पूर्णतया सहमत हूं कि किसी भी लोकतंत्रात्मक सरकार के अधीन जो निर्वाचन हों उनमें कार्यपालिका को हस्तक्षेप न करना चाहिये किन्तु मेरी समझ में यह नहीं आता कि निर्वाचन-व्यवस्था का हमेशा के लिये केन्द्रीकरण क्यों हो। यही एक विचारणीय बात है। मैं अब इस सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त करूंगा कि संविधान के मसौदे में मूल अनुच्छेद 289 किस प्रकार था और संशोधन संख्या 99 द्वारा उसके स्थान पर जो नवीन अनुच्छेद प्रविष्ट होगा वह किस प्रकार है, विशेषत: उसका खण्ड (3) किस प्रकार है। अब मैं संक्षेप में इस अनुच्छेद का इतिहास बताना चाहता हूं। पहले 4 जुलाई, 1947 को संघीय संविधान समिति का प्रतिवेदन उपस्थित किया गया था। उसके पृष्ठ 55 पर यह कंडिका थी:

> ''इस संविधान के अधीन होने वाले सभी निर्वाचनों का अधीक्षण, निदेशन तथा नियंत्रण, चाहे वे संघीय निर्वाचन हो या प्रान्तीय, जिसके अन्तर्गत इन निर्वाचनों से उद्धृत या संयुक्त सन्देहों और विवादों के निर्णय के लिये निर्वाचन-न्यायाधिकरण की नियुक्ति भी है, एक आयोग में निहित होगा जिसे राष्ट्रपति नियुक्त करेगा।''

इस प्रकार इस खण्ड (24) में यह उपबन्धित था कि निर्वाचन चाहे संघीय हो अथवा प्रान्तीय, उसका अधीक्षण, निदेशन और नियंत्रण एक ही आयोग में निहित होगा। इसके पश्चात् यह विषय सभा के सम्मुख 29 जून, 1947 को रखा गया, उस समय मैंने इस आशय का एक संशोधन उपस्थित किया था कि इसका सम्बन्ध केवल संघीय निर्वाचन से हो। विचार यह था कि प्रांतों के लिये भी इसी प्रकार के स्वतंत्र निर्वाचन-न्यायाधिकरण स्थापित किये जाने चाहिये। उस समय भी उद्देश्य यही था कि निर्वाचन स्वतंत्र रूप से होने चाहिये। केवल प्रश्न यह था कि प्रांतों अथवा राज्यों के लिये पृथक तथा स्वतंत्र निर्वाचन आयोग होने चाहिये या नहीं। यह समझा गया था कि दिल्ली में अथवा किसी अन्य स्थान पर स्थित किसी आयोग के लिये सारे भारत के निर्वाचनों का प्रबन्ध करना कठिन हो जायेगा। उस समय तदविषयक खण्ड के प्रस्तावक श्री गोपालास्वामी आयंगर ने उस संशोधन को स्वीकार कर लिया था। उस समय सभी का, और डा. अम्बेडकर का भी, विचार यह था कि निर्वाचनों में कार्यपालिका का हस्तक्षेप न होना चाहिये। केवल विचारणीय प्रश्न यह था कि विभिन्न आयोग होने चाहिये या नहीं क्योंकि यह समझा गया था कि एक आयोग इस कार्य को सम्पन्न करने में समर्थ न होगा। उसके पश्चात् 29 अगस्त को मसौदा-समिति नियुक्त की गई, जिसने सभा के निर्णय पर विचार किया और अनुच्छेद 289 (1) और (2) का मसौदा तैयार किया। मसौदे के प्रतिवेदन में कहा गया है:

> ''समिति के विचार से इसकी आवश्यकता नहीं है कि संविधान में निर्वाचन के विवरण का समावेश हो, जिसमें निर्वाचन क्षेत्रों का परिसीमन आदि भी सम्मिलित है।''

उसने यह उचित समझा कि यह तदविषयक विधि द्वारा उपबन्धित किया जाये। इस प्रकार उसने इस सभा के 29 जुलाई के निर्णय पर विचार किया और वास्तव में अनुच्छेद 289 उस निर्णय के अनुरूप ही है। सभा को इस पर विचार करना चाहिये कि अनुच्छेद

289 के खण्ड (1) और (2) से हमारे उद्देश्य की पूर्ति हो जाती है या नहीं। इसे स्वीकार करते हुए भी कि निर्वाचन लोकतंत्र का आधार है और उसमें कार्यपालिका का हस्तक्षेप न होना चाहिये, हमें इस पर विचार करना चाहिये कि क्या अनुच्छेद 289 के खण्ड (1) और (2) पर्याप्त नहीं है। जहां तक संघीय निर्वाचनों का सम्बन्ध है, वर्तमान संशोधित अथवा नवीन अनुच्छेद और अनुच्छेद 289 का खण्ड (1) एक समान है। यदि हमें संघीय आयोग को नियुक्त करना होगा तो केन्द्रीय सरकार, जो कार्यपालिका है, उसे नियुक्त न कर सकेगी। खण्ड (2) के सम्बन्ध में मसौदा समिति ने यह विचार किया कि यदि प्रान्तों के लिये निर्वाचन आयोग स्थापित करने होंगे तो यदि उन्हें सरकार स्थापित न करेगी और राज्यों के राज्यपाल स्थापित करेंगे तो वे भी उसी प्रकार स्वतंत्र होंगे। मसौदा तैयार करते समय उद्देश्य यह था कि राज्यपाल निर्वाचित राज्यपाल हो। इस समय कोई भी राज्यपाल निर्वाचित राज्यपाल नहीं है और अब हमने यह उपबन्धित किया है कि राज्यपालों का नामनिर्देशन राष्ट्रपति करेगा। इसलिये जब आयोग को नामनिर्दिष्ट राज्यपाल स्थापित करेगा तो वास्तव में उसे राष्ट्रपति ही स्थापित करेगा। राष्ट्रपति संघीय विधानमंडल के निर्वाचनों के लिये जिस आयोग को स्थापित करेगा वह स्वतंत्र होगा। किन्तु यह मेरी समझ में नहीं आता कि प्रान्तों में राज्यपालों द्वारा स्थापित आयोग भी इसी प्रकार स्वतंत्र क्यों न हो। राज्यपाल अपने पद के अस्तित्व के लिये राष्ट्रपति पर निर्भर रहेगा। इस सम्बन्ध में यदि यह आवश्यक समझा जाये तो प्रान्तीय आयुक्त की नियुक्त करने की शक्ति राष्ट्रपति को ही दी जा सकती थी, किन्तु क्या यह आवश्यक है कि, चाहे जितनी भी असुविधाएं हों किन्तु एक ही केन्द्रीय आयोग स्थापित किया जाये? इसके अतिरिक्त खण्ड (3) में प्रादेशिक आयुक्तों के लिये कोई स्थान नहीं है। केवल एक केन्द्रीय आयोग की व्यवस्था की गई है और प्रादेशिक आयुक्तों को उस आयोग की सहायता करनी है। क्या यह उचित है कि भारत के एक कोने में स्थापित किसी आयोग को यह काम सौंपा जाये और प्रादेशिक आयुक्त उस आयोग की केवल सहायता ही करे? मैं इसका कोई भी कारण नहीं समझ पाया हूं। इसके अतिरिक्त हमारे सम्मुख संविधान के प्रस्तुत होने के पश्चात् मई, 1949 के मध्य में हमें एक विवरण दिया गया था जिसमें यह कहा गया था कि 29 जुलाई, 1947 को जो निर्णय किया गया था उसे किन कारणों से बदला गया है। मैं अब इन कारणों का विश्लेषण करूंगा। पहला कारण यह बताया गया कि इस विषय पर सावधानी से विचार करने की आवश्यकता है, और कुछ समाचार पत्रों में यह संकेत किया गया कि कुछ प्रान्तों में सरकार अपने ही समर्थकों को पंजीबद्ध कराने में सहायता कर रही हैं यह डा. अम्बेडकर ने भी कहा था। श्रीमान्, इस सभा का प्रत्येक सदस्य ऐसी कार्यवाहियों की निन्दा ही करेगा जिनसे संविधान द्वारा लोगों को प्रदत्त मताधिकार का अपहरण होता हो, किन्तु इसका उपचार क्या है? यथोचित उपचार तो यही है कि जो लोग इस प्रकार के कार्यों को करें उनके विरुद्ध कार्यवाही की जाये। केन्द्रीय सरकार को इस प्रकार के कार्यों की रोकथाम के लिये पूर्ण शक्ति तथा प्राधिकार प्राप्त है। यह जनतंत्र के हित में है। इसके अतिरिक्त हमसे यह भी कहा गया कि कुछ समाचार-पत्रों ने यह संकेत किया है कि कुछ प्रान्तीय सरकारें कुछ अनियमित कार्य कर रही हैं। श्रीमान्, यदि केवल संकेत ही किया गया है तो विचलित होने की क्या आवश्यकता है? सम्भवत: डा. अम्बेडकर को इस सम्बन्ध में अधिक जानकारी प्राप्त

[श्री एच.वी. पातस्कर]

है कि प्रान्तों में क्या हो रहा है। मंत्रिमंडल में रहते हुए उन्हें इसकी जानकारी प्राप्त होगी। यदि ये बातें सच हैं तो उन लोगों के विरुद्ध कार्यवाही की जाये जो भाषा और मूलवंश के आधार पर अथवा अन्य कारणों से लोकतंत्र की उपेक्षा करते हैं।

दूसरा कारण यह बताया गया कि प्रांतीय विधान-सभाओं के उपनिर्वाचनों के सम्बन्ध में हारने वलो पक्षों ने यह आरोप लगाया है कि प्रान्तीय सरकारें अपनी स्थिति से अनुचित लाभ उठाती हैं। यह एक बुरी बात है। किन्तु यह मेरी समझ में नहीं आता कि केवल प्रक्रिया में परिवर्तन करने से इस दोष का परिहार किस प्रकार होगा। यदि किसी सरकार में ऐसे लोग हैं जो इस प्रकार के कार्य करते हैं तो वे किसी भी लोकतंत्रात्मक सरकार में रहने योग्य नहीं हैं। यदि इस प्रकार के एक दो उदाहरणों की ओर ध्यान आकृष्ट किया गया है तो इनको मिटाने का उपाय यह नहीं है कि जिन बातों का किसी अन्य स्थल पर उल्लेख नहीं है, उसका उल्लेख संविधान में किया जाये। प्रतिवेदन में इन दो कारणों को बताया गया है किन्तु मेरे विचार से ये युक्तियुक्त नहीं है।

इसके अतिरिक्त यह कहा गया है कि कनाडा के 1920 के निर्वाचन-अधिनियम को देख कर ही मसौदा समिति ने अनुच्छेद 289 के मसौदे को बदलने का विचार किया। श्रीमान्, मैंने यह देखा कि उस अधिनियम में केवल उस अधिराज्य की संसद के निर्वाचनों के लिये एक मुख्य आयुक्त की नियुक्ति का उल्लेख है। डा. डासन ने हाल में कनाडा की सरकार पर जो पुस्तक लिखी है उसके पृष्ठ 380 पर वे यह कहते हैं कि मुख्य आयुक्त अथवा मुख्य निर्वाचन पदाधिकारी इसलिये नियुक्त किया गया कि अधिराज्य के निर्वाचनों का प्रबन्ध एक पदाधिकारी स्वतंत्र रूप से कर सके। केवल संघीय निर्वाचनों के सम्बन्ध में ही मुख्य पदाधिकारी कार्य करता है। इस सम्बन्ध में इस सभा को भी कोई आपत्ति नहीं है। हमारे संविधान में इस आशय का एक अनुच्छेद, अर्थात् अनुच्छेद 289 (क) है। यह एक आश्चर्य की बात है कि केन्द्रीय प्राधिकारी प्रान्तीय निर्वाचनों के लिये भी इस प्रकार की नियुक्त को आवश्यक समझते हैं।

मेरे विचार से ये सब परिवर्तन इस कारण किये जा रहे हैं कि अब हम धीरे-धीरे संघीय शासन का विचार छोड़ते जा रहे हैं। यद्यपि इस सभा में कार्यारम्भ के समय हमने संघीय शासन स्थापित करने का विचार किया था किन्तु कुछ प्रान्तीय घटनाओं के कारण और आन्तरिक तथा वैदेशिक स्थिति के कारण भी अब हम उस विचार को बदलने का अधिकाधिक प्रयास कर रहे हैं। इस सभा ने जो प्रथम संकल्प स्वीकार किया था, और जो लक्ष्य सम्बन्धी संकल्प के नाम से विख्यात है, उसमें यह कल्पना की गई थी कि स्वायत्तशासी एककों का एक संघ होगा जिसे अवशिष्ट शक्तियां भी प्राप्त होंगी। अब हम उस विचार का परित्याग कर रहे हैं। आरम्भ में हमने यही विचार किया था कि स्वायत्तशासी एककों का एक संघ होगा। सम्भवत: अब स्वायत्तशासी एककों को स्थापित करने की आवश्यकता न हो। प्रान्तों का भी नाम बदल दिया गया है और उन्हें अब राज्य कहा जाता है। इसके अतिरिक्त देश विभाजन की दुर्घटना के कारण एकात्मक शासन के पक्ष में ही मतपरिवर्तन हो गया। इन्हीं कारणों से हम सभी कार्य इस प्रकार कर रहे हैं जिससे कोई संकट उपस्थित न हो सके। हम संघ शासन की छाया को तो पकड़े हुए हैं किन्तु उसके

आकार में हमने आमूल परिवर्तन कर दिया है। इस प्रक्रिया के फलस्वरूप ही यह संशोधन सभा के सम्मुख रखा गया है। इस प्रक्रिया की मुख्य बातें यह हैं कि हमने निर्वाचित राज्यपालों के स्थान में नामनिर्देशित राज्यपालों को रखा है और हम यह भी चाहते हैं कि केन्द्र को ऐसे विषयों के सम्बन्ध में भी विधि-निर्माण की शक्ति प्राप्त हो, जो प्रान्तों को सौंपे गये थे। अब हमारे सामने यह प्रस्ताव है कि प्रान्तीय विधानमंडलों के निर्वाचन के सम्बन्ध में भी केवल केन्द्र को ही शक्ति प्राप्त हो। वास्तव में इस संशोधन संख्या 99 का अर्थ यह है कि हम प्रान्तों के निर्वाचन आयुक्तों के पदों को समाप्त कर रहे हैं। मैं कह नहीं सकता कि यह क्यों किया जा रहा है। यदि राष्ट्रपति केन्द्र के लिये एक आयोग स्थापित कर सकता है तो वह विभिन्न प्रान्तों के लिये निर्वाचन-आयुक्तों को भी क्यों नियुक्त नहीं कर सकता? हम हमेशा प्रान्तीय निर्वाचनों में हस्तक्षेप करके लोकतंत्र के मार्ग में बाधा क्यों डालें? मेरा यह निवेदन है कि इसका यह अर्थ है कि हम केन्द्र और प्रान्तों के बीच मतभेद उत्पन्न होने के लिये अधिक अवसर दे रहे हैं। क्या इसकी आवश्यकता है? यदि आपका यह विचार हो कि राज्यपाल पर प्रान्तीय सरकार का प्रभाव पड़ सकता है और उस पर आपका विश्वास न हो तो निर्वाचनों के लिये राष्ट्रपति ही प्रान्तीय आयुक्तों और प्रादेशिक आयुक्तों को नियुक्त करे। आप यह क्यों माने लेते हैं कि प्रांतों में प्रशासन दोषरहित न होगा और लोकतंत्र की प्रथाओं का अनुसरण न किया जायेगा? यह उचित नहीं है। मेरे विचार से इस प्रकार के उपबन्ध का अर्थ यही है कि हम संघीय प्रणाली के सिद्धान्तों का परित्याग कर रहे हैं। नामनिर्देशित राज्यपालों पर भी हमें विश्वास नहीं है। हम वयस्क मताधिकार को प्रयोग में लाने जा रहे हैं। निस्सन्देह संक्रान्ति काल के लिये हमें कुछ विशिष्ट उपबन्धों को स्थान देना पड़ेगा। किन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि इस प्रकार के उपबन्ध को स्थान दिया जाये। आखिर अब केन्द्र के लिये अथवा किसी प्रान्त के लिये निर्वाचन होगा तो वह वयस्क मताधिकार के आधार पर होगा और लगभग एक ही प्रकार के प्रतिनिधि निर्वाचित होंगे। इसलिये यह मेरी समझ में नहीं आता कि इन दो निर्वाचनों में विभेद क्यों किया गया है। इससे केवल विरोध की भावना जागृत होगी, जिसे किसी प्रकार भी हितकर नहीं कहा जा सकता है। श्रीमान्, मैं इसे स्वीकार करता हूं कि इस समय की स्थिति ऐसी है कि हमें एक शक्तिशाली केन्द्रीय सरकार की आवश्यकता है। परन्तु केन्द्रीय सरकार को शक्तिशाली बनाने का क्या अर्थ है? क्या इसका अर्थ यह है कि केन्द्रीय सरकार इतनी शक्तिशाली हो कि प्रान्तों की उन शक्तियों का भी अपहरण हो जाये जो उन्हें प्राप्त होनी चाहिये? आज कल यह प्रथा चल पड़ी है कि यदि कोई व्यक्ति प्रान्तों की चर्चा करता है तो वह चर्चा राष्ट्र विरोधी कही जाती है। यह एक बहुत गलत बात है।

***अध्यक्षः** क्या आप अधिक देर तक बोलना चाहते हैं?

***श्री एच.वी. पातस्करः** जी हां, श्रीमान्।

***अध्यक्षः** तब आप कल बोल सकते हैं।

***मि. तजम्मुल हुसैन** (बिहार : मुस्लिम): इसके पूर्व कि आप सभा को स्थगित करें, मैं यह कहना चाहता हूं कि चूंकि हमने समाचारपत्रों में पढ़ा है कि सभा.....

***अध्यक्ष:** माननीय सदस्य महोदय यदि प्रतीक्षा कर सकें तो सभा को स्थगित करने के पूर्व मैं स्वयं एक वक्तव्य देना चाहता हूं।

हम इस अनुच्छेद पर कल भी विचार-विमर्श करते रहेंगे। आज सभा के स्थगित होने के पूर्व मैं कार्यक्रम के सम्बन्ध में एक वक्तव्य देना चाहता हूं। हम संविधान के लगभग तीन चौथाई अंश को समाप्त कर चुके हैं। कुछ अनुच्छेद तथा कुछ भागों पर अभी विचार नहीं किया गया है किन्तु इस समय हम इस स्थिति में नहीं हैं कि उन पर विचार-विमर्श कर सकें। उदाहरण के लिये कुछ मामलों के सम्बन्ध में देशी राज्यों की स्थिति अभी बिल्कुल स्पष्ट नहीं हुई है। इसके अतिरिक्त संघ और एककों के बीच राजस्व के वितरण का प्रश्न भी है। इसके लिये केन्द्रीय सरकार को प्रान्तीय सरकारों से परामर्श करना होगा। कई कारणों से इसके लिये तुरंत ही सम्मेलन न हो सकेगा। उनमें से एक यह भी है कि एक अत्यावश्यक राष्ट्रीय कार्य के लिये वित्तमंत्री महोदय को कुछ समय के लिये विदेश जाना है। इसलिये यह आवश्यक हो गया है कि संविधान के अवशिष्ट अनुच्छेद पर कुछ समय के लिये विचार-विमर्श स्थगित किया जाये ताकि इस बीच परामर्श किया जा सके और इन अनुच्छेदों को उस समय उठाया जा सके अब उन पर अन्तिम रूप से विचार करने के लिये पूरी तैयारी हो जाये। इसलिये यह सुझाव रखा गया है कि संविधान के अन्य अनुच्छेदों पर कल के बाद विचार विमर्श स्थगित किया जाये और लगभग पांच सप्ताह पश्चात् फिर समवेत हो और दूसरे पठन में संविधान के अवशिष्ट अनुच्छेदों को स्वीकार करें। जब दूसरा पठन समाप्त हो जायेगा तो मसौदा समिति को विभिन्न अनुच्छेदों को यथास्थान रखने, मसौदा की दृष्टि से उनकी परीक्षा करने तथा यह देखने में कुछ समय लगेगा कि उनमें कोई कमी तो नहीं रह गई है। इसमें नि:संदेह कुछ समय लगेगा किन्तु जब यह कार्य समाप्त हो जायेगा तो हम तीसरे पठन के लिये समवेत होंगे। मेरे विचार से वह सत्र अल्पकालीन होगा, क्योंकि दूसरे पठन में सभी बातों पर पूर्ण रूप से विचार कर लिया जायेगा और तीसरे पठन में अधिक देर नहीं लगेगी मैंने यह कार्यक्रम निश्चित किया है और इसलिये सदस्य महोदय यही समझे कि कल के बाद पांच सप्ताह के लिये सभा-स्थगित रहेगी। सभा के समवेत होने की निश्चित तिथि मैं बाद को घोषित करूंगा।

***श्री आर.के. सिधवा:** क्या निश्चित तिथि बताई जा सकती है?

***अध्यक्ष:** जैसा कि मैं कह चुका हूं, निश्चित तिथि बाद को घोषित की जायेगी।

***मि. तजम्मुल हुसैन:** नियमों के अनुसार अध्यक्ष महोदय को तीन दिन से अधिक समय के लिये सभा स्थगित करने की शक्ति प्राप्त नहीं है।

***श्री एल. कृष्णास्वामी भारती** (मद्रास : जनरल): कल सभा स्थगित होने के पूर्व एक रस्मी प्रस्ताव उपस्थित किया जा सकता है।

***अध्यक्ष:** अब सभा स्थगित होगी तो वह नियमानुसार ही स्थगित होगी।

अब कल प्रात: आठ बजे तक के लिये सभा स्थगित होती है।

इसके पश्चात् सभा बृहस्पतिवार, 16 जून 1949 के आठ बजे तक के लिये स्थगित हो गई।